स्वाध्याय-गीताञ्जली...(धारा...33)

स्वाध्याय तपस्वी श्रमणाचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव

पुण्य-स्मरण

1. हिरणमगरी, सेक्टर-11, उदयपुर (2014) के प्रभावना पूर्वक चातुर्मास
2. आचार्य अभिनन्दन सागरजी गुरुदेव की समाधि के उपलक्ष्य में

द्रव्यदाता

1. श्री भरतकुमार शाह एवं श्रीमती प्रेमलता, माण्डव
2. हिरणमगरी, सेक्टर-11, उदयपुर के उदार ज्ञान-दानी
3. श्री दिगम्बर जैन समाज, सविना
4. श्री महेश, पूजा, शगुन, रिया जैन, दिल्ली
5. श्री संजय, दीप्ति, मुस्कान, खुशी जैन, दिल्ली
6. श्रीमती विजय, श्री अमित, शिखा, प्रिया, पारस जैन, दिल्ली

ग्रंथांक-236 प्रतियाँ- 500
संस्करण-2015 मूल्य-51/-

सम्पर्क सूत्र एवं प्राप्ति स्थान

आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव द्वारा आशीर्वाद प्राप्त

1. धर्म-दर्शन सेवा संस्थान

द्वारा-श्री छोटूलाल जी चित्तौड़ा

चन्द्रप्रभ दि. जैन मन्दिर, आयड़, आयड़ बस स्टॉप के पास,
उदयपुर (राज.)-313001/मो. 097832-16418

2. डॉ. नारायणलाल कछारा

सचिव-धर्म-दर्शन सेवा संस्थान
55, रवीन्द्रनगर, उदयपुर (राज.)-313001
फोन नं. 0294-2491422/मो. 092144-60622
E-mail:nlkachhara@yahoo.com

आध्यात्मिक क्रांतिकारी महाकवि आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव की व्यापक वैश्विक दृष्टिदायिनी गीताञ्जली धाराएँ...

भावानुमोदक-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

(चाल : सुनो-सुनो ऐ दुनिया वालों....., भातुकली (मराठी)....., सायोनारा.....)

सुनो व जानो दुनिया वालों...कनक गुरु की गीताञ्जली...
जिसे सुनकर तुम जानोगे...कविताओं/(गीतों) की गहन पद्धति...(स्थायी)

दीर्घकालिक थी पीड़ा मन में...काव्य के गिरते स्तर की...
उस पीड़ा के कारण निकली...काव्य धाराएँ गीताञ्जली...

अब तक प्रायः सृजन हुई हैं...द्वात्रिंशत ग्रंथ काव्याञ्जली...
जो बनी हैं युगान्तकारी...आध्यात्म-दर्शन-विज्ञान वाली...सुनो व जानो...(1)

प्राचीन व तात्कालिक ज्ञान...विज्ञान है जिसमें समाहित...
बहुविधायी बहुआयामी...बहुरागीय बहुविषयक...

बाल[1]-प्रौढ़[2]-जैन[3]-नैतिक[4]...आध्यात्मिक भावप्रद...
प्रकृति-पर्यावरण[5]-विविध[6]...आत्मकल्याण[7] व तीर्थंकर[8]...सुनो व जानो...(2)

समीक्षा[9] विश्वशांतिप्रद[10]...सर्वोदय[11] व स्वास्थ्यकर[12]...
आधुनिक[13] सर्वोदय-शिक्षा[14]...ब्रह्माण्डीय विज्ञान[15] बोध...

मानवीय[16] नारी[17] व अनुभव[18]...भारतीय[19] जन-जैन एकता[20]...
धर्म[21]-सफलता[22]-चिन्तन-स्मरण[23]...प्रेरक कथा-आत्मकथा[24]...सुनो व जानो...(3)

धर्म-दर्शन[25] व सर्वोदय[26] युत...अनुशासन[27]-व्यक्तित्व विकास[28]...
जीवन प्रबंधन[29]-उपलब्धि[30]...अनुवाद[31]-रहस्य[32] विविध प्रयास...

शोध-बोध-समीक्षा युक्त...व्यापक वैश्विक दृष्टिदायी...
'सुविज्ञ' जनों के प्रबोधक हैं...महाकवि श्री कनकनन्दी...सुनो व जानो...(4)

(प्रस्तुत कृति की रचना हुई...वैज्ञानिक अग्रवाल के कारण...
अनुरोध उन्होंने किया 'कनक' को...ग्रंथों पर काव्य करो सृजन...)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, उदयपुर, दिनांक 31.01.2015, रात्रि 8.55

ज्ञान-विज्ञान-आनंद का वसन्त आया!

-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

(चाल : क्या मौसम आया है...)

ज्ञानानन्द आया है...स्वाध्याय चला है/(प्रवचनसार पाया है)...
सत्य-साम्य-सुखामृत त्रिवेणी बहीऽऽऽ
(आगम)/विज्ञान की वासन्ती पुरवाई चलीऽऽऽ
कनकनन्दी गुरुवर...अभिप्रेरक हैं त्राता...
आगम के दीवाने...हो ज्ञान/(आनन्द) के दाता...ज्ञानानन्द...(ध्रुव)
ज्ञान है गजब तेरा, ध्यान है अजब तेरा...थाम के तेरे चरण चले...
तुम्हीं अर्हन् मेरे, तुम्हीं भगवन् मेरे...साधना तीनों याम चले...
जो भी आये यहाँ...पाते हैं सुख-साता...
शिवपथ के अनुगामी...भव्यों के हो त्राता...ज्ञानानन्द...(1)
अपूर्व आनन्द होता है, जब स्वाध्याय सभा चलती है...
ज्ञान होता बहुत विषयक...जब गुरु देशना होती है...
धर्म-दर्शन-विज्ञान...समन्वय होता...
प्राचीन से आधुनिक...ज्ञान-बोध होता...ज्ञानानन्द...(2)
दिक्-श्वेताम्बर-हिन्दू-मुस्लिम, सिक्ख-ईसाई आते हैं...
कुलपति-वैज्ञानिक-जज, शिक्षा शास्त्री (भी) आते हैं...
आकर के शोध करे...संगोष्ठी भी करे...
देश-विदेशों में...प्रभावना करे...ज्ञानानन्द...(3)
ग्राम-ग्राम में, नगर-डगर में...हम तुम्हारे साथ चले...
मन ये मगन है, स्व की लगन है...निज आतम का ध्यान करे...
यश ख्याति प्रसिद्धि...नाम से दूर रहे...
समता के साधक...सतत आगे बढ़े...ज्ञानानन्द...(4)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, उदयपुर, दिनांक 03.02.2015, रात्रि 8.35

हमारे ससंघ की दैनंदिनी

(हमारे ससंघ के व्यस्त-मस्त-सृजनात्मक कार्य)

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : जय हनुमान..., शत-शत वंदन..., माइन-माइन...)

मेरी ही दैनंदिनी का, मैं कर रहा हूँ वर्णन।

जिससे मैं सतर्कता से, करूँ स्व-कर्त्तव्य पालन।।
मेरा परम ध्येय है, स्वात्मा की ही उपलब्धि।
मेरा लक्ष्य नहीं है, सत्ता-सम्पत्ति-प्रसिद्धि।।

सत्य-समता-शांति से ही, होती आत्म उपलब्धि।
इसी हेतु मुझे चाहिए, ध्यान-अध्ययन व विशुद्धि।।
इसी हेतु मैं द्वंद्व-संक्लेश का, कर रहा हूँ विसर्जन।
उदार-सहिष्णु-निस्पृहता का, कर रहा हूँ मैं सर्जन।।

इसी हेतु मैं रहता हूँ मौन, प्रायः दिन में बीस (20) घंटे।
एकांत में रहता हूँ प्रायः, दिन में अठारह (18) घंटे।।
अध्ययन अध्यापन लेखन में/(प्रश्नोत्तर में), व्यतीत होते सोलह (16) घंटे।
शोध-बोध वैज्ञानिक ज्ञान में, उपयोग होते यह घंटे।।

प्राणायाम-योगासन-व्यायाम, भ्रमण में लग जाते दो (2) घंटे।
आहार-निहार-शुद्धि हेतु, लग जाते है तीन (3) घंटे।।
प्रतिक्रमण-भक्ति-वंदना में, व्यतीत होते दो (2) तीन (3) घंटे।
अध्यापन आदि कार्य के बाद, मौन एकांतवास/(विश्राम) में कुछ घंटे।

देश-विदेशों में धर्म प्रचार हेतु, होते विभिन्न भी कार्यक्रम।
शिविर-संगोष्ठी-प्रवचन-कक्षादि में, देता हूँ शिक्षा व मार्गदर्शन।।
समय-शक्ति व उपलब्धियों का, होता सदुपयोग व संवर्द्धन।
इसी से ससंघ-भक्त-शिष्य सह, व्यस्त-मस्त रहते है रात-दिन।।

अतएव हमारे पास न रहता, व्यर्थ कार्य हेतु कुछ भी क्षण।
लन्द-फन्द व निन्दा गप्प हेतु, न होता भाव न होता कुछ क्षण।।
सन्थ गति से शांत भाव से, स्व-पर-विश्व हेतु (हम) करते काम।
पाप-ताप-संताप त्याग कर, 'कनक' करे स्व-आत्म शोधन।।

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 22.01.2015, मध्याह्न 1.34

आचार्य कनकनन्दी ससंघ के दैनिक कार्यक्रम

(पूर्वनियोजित सुयोग्य कार्य ही संघ में होते)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : छोटी-छोटी गैया....., तीन बार भोजन भजन एक बार.....)
हमारे संघ के कार्यक्रम मैं लिखूँ, जिससे सबको हो सही परिज्ञान।

जिससे सभी लोग लाभान्वित हो, स्व-पर विश्वकल्याण में समर्थ भी हो।। (1)

तीन बार सामायिक स्वाध्याय दो बार, प्रतिक्रमण होते हैं दिन में दो बार।
लेखन व संशोधन ग्रंथों का होता, आहार दिन में एक बार ही होता।। (2)

प्रतिष्ठापन (शौच) हेतु बाहर भी जाते, प्राणायाम योगासन बाहर करते।
शोध-बोध-अनुसंधान रोज करते, देश-विदेशों के साहित्य भी (रोज) पढ़ते।। (3)

दबाव प्रलोभन व संक्लेश बिना, प्रवचन करते आडम्बर के बिना।
पूजा विधान प्रभावना शिविर, संगोष्ठी होती द्वंद्व कलह बिना।। (4)

व्यवस्थित कार्यक्रम सदा ही चले, सेवा सहयोग से शांति से चले।
अतएव पूरा संघ ही व्यस्त रहता, अन्य जनों का भी सहयोग रहता।। (5)

हर कार्य नियोजना पूर्व ही होते, जिससे हर कार्य व्यवस्थित चलते।
संतुष्टी शांति व शिक्षा मिलती, अशांति अव्यवस्था देरी न होती।। (6)

इससे संघ के कार्य होते महान्, देश-विदेशों के धार्मिक काम।
विश्वविद्यालयों में शोध प्रबंध काम, स्वसंघ परसंघ के अध्ययन के काम।। (7)

देश-विदेशों से वैज्ञानिक भी आते, दिगम्बर-श्वेताम्बर हिन्दू भी आते।
अध्ययन व शोध कार्य करते, आध्यात्मिक प्रगति यहाँ करते।। (8)

व्यस्त-मस्त-संतोष भी हम रहते, पूर्वनियोजना पूर्वक कार्य करते।
अन्यथा कार्यक्रमों में व्यवधान पड़ता, वैश्विक धर्म प्रचार सही न होता।। (9)

अनावश्यक काम हम नहीं करते, आडम्बर अव्यवस्थित काम न होते।
अन्य के सहयोग से भी हम ऐसा चाहते, 'कनक' को महान् कार्य ही भाते।। (10)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 18.12.2014, प्रातः 7.45

स्वाध्याय तपस्वी गुरुवर निराले

(आचार्य कनकनन्दी गुरुदेव के व्यक्तित्व-कृतित्व-वैशिष्ट्य)

भावानुमोदक-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

(चाल : मेरे नैना सावन-भादों.....)

हे! विश्वगुरु कनकनन्दी...स्वाध्याय तपस्वी हैं आला...2
/(सारे जहाँ ने है जाना/सुविज्ञ जनों ने है माना)...ध्रुवपद...

बचपन से अध्ययन..शील...मनन चिन्तनशील...
वैज्ञानिक संत नायक...हे ! अध्यात्म योगी...

कल्पनाशील अन्वेषी.../(सनम्र सत्यग्राही)...
अभीक्ष्ण ज्ञान-उपयोगी...आगम-निगम बखानी...2...हे! विश्व गुरु...(1)...

प्राचीन गुरुकुल ऋषि...आधुनिक विज्ञान मनीषी...
धर्म-दर्शन-विज्ञान समन्वित...रत्नत्रय के धारी...
विज्ञान दृष्टि धारी...
नवाचार युग परिवर्तन का...उपलब्धि अति भारी...2...हे! विश्व गुरु...(2)...

गद्य-पद्यमय...साहित्य सृजन करे...
द्विशताधिक शास्त्र रचे हैं...युग परिवर्तनकारी...
अत्यन्त हितकारी...
आधुनिक विज्ञान परे है...जैन तथ्य शोधकारी...2...हे! विश्व गुरु...(3)...

स्वाध्याय तप किया...अहर्निश उद्यम किया...
किरणें ऐसी निकली ज्ञान की...कर दिया जग उजियारा...
वैश्विक ज्ञान प्रसारा...
कितने पावन कितने त्यागी...'सुविज्ञ' मन भर आया...2...हे! विश्व गुरु...(4)...

वैज्ञानिक श्रमणाचार्य श्री कनकनन्दी जी गुरुदेव प्रणीत वैज्ञानिक संगोष्ठी की महिमा.....

महिमा सुमनअर्चक-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

(चाल : सारे जहाँ से अच्छा....., सायोनारा.....)

वैज्ञानिक संगोष्ठी...परम विज्ञान वाली...
कनक सूरी प्रणीत...विश्व गुरुत्व वाली...(ध्रुवपद)...

उद्देश्य इसके ऊँचे...सत्य-साम्य-सुखकारी...
धर्म-दर्शन-विज्ञान...तीनों समन्वयकारी...2
वैश्विक दृष्टिधारी...उदारता प्रदायी...कनक सूरी प्रणीत...(1)

भौतिक एकांत का तम...होता है दूर इससे...
अनेकांत का प्रकाश...होता प्रसार इससे...2
समावेश का आकाश...होता है विश्वव्यापी...कनक सूरी प्रणीत...(2)

वैश्विक होते प्रवक्ता...सूरी कनकनन्दी...
निश्रा में जिनकी पाते...समाधान सर्वदेशी...2
स्याद्वादमय वाणी...होती प्रभावकारी...कनक सूरी प्रणीत...(3)

मौलिक निराली होती...प्रश्नोत्तर पद्धति...
जिज्ञासु शोधार्थी को...समाधान रूप होती...2
समीक्षाकारी वाणी...जोड़ रूप ज्ञान होती...कनक सूरी प्रणीत...(4)

पूर्वाग्रहों को त्यजकर...'सुविज्ञ' जन है आते...
सनम्र सत्यग्राही...बनते सुमार्ग गामी...2
ऐसी विज्ञान गोष्ठी...होती प्रभावशाली...कनक सूरी प्रणीत...(5)

अपूर्व व अलौकिक कार्य करना है मुझे

(ईसाई नववर्ष (2015) की पूर्व संध्या में बनी मेरी कार्य योजनाएँ)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : शत-शत वंदन....., सायोनारा.....)

अनादि काल से अनंत भवों में, जो कार्य किया है मैंने।
इससे परे मुझे काम करना है, (जो) अपूर्व (व) अप्रचलित लोक में।। (1)

अभी तक मैंने अनंत बार, जन्म-मरण व भोग-भोगा।
राग-द्वेष-मोह-काम सहित, संकल्प-विकल्प अनेक किया।। (2)

सत्ता-संपत्ति व प्रसिद्धि हेतु, विभिन्न पाप भी अनेक किया।
शत्रु-मित्र-भाई-बंधु के लिए, अनेक अनर्थ मैंने किया।। (3)

आहार भय मैथुन परिग्रह हेतु, विभिन्न पाप भी अनेक किया।
तन-मन-इन्द्रियों के वशवर्ती होकर, अहित काम भी (अनेक) किया।। (4)

कट्टर संकीर्ण रूढ़ि परंपरा व, अंधश्रद्धा से धर्म भी किया।
दिखावा आडम्बर व प्रसिद्धि हेतु या, कामना द्रोह से धर्म भी किया।। (5)

अभी अनेक लोग देश-विदेशों के, जो कार्य कर रहे (हैं) अज्ञानवश।
राग-द्वेष या मोह से प्रेरित होकर, अथवा संकीर्ण स्वार्थवश।। (6)

वे सभी काम मैं न करूँगा, यद्यपि वे हो धर्म या शिक्षा क्षेत्र के।
धन-जन-मान या प्रसिद्धि के काम, सामाजिक राष्ट्रीय हो या विश्व के।। (7)

सत्य समता व शांति के कार्य, करूँगा महान् लक्ष्य व भाव से।
उदार पवित्र व निःस्वार्थ भाव से, स्व-पर-विश्व कल्याण हेतु से।। (8)

दबाव प्रलोभन व द्वंद्व संक्लेश रिक्त, करूँगा हर काम आत्महित में।
आत्मविशुद्धि ही परम लक्ष्य मेरा, अंतरंग-बहिरंग हर कार्य में।। (9)

सच्चिदानन्दमय मेरा ध्रुव स्वभाव, उसकी उपलब्धि है मेरा परम लक्ष्य।
उसके हेतु ही मेरा हर कार्य, कनक का नहीं अन्य परम लक्ष्य।। (10)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 31.12.2014, रात्रि 8.11

मेरी परोपकारी भावना सफल हो

(चाल : अच्छा सिला दिया.....)

परोपकार की मेरी भावना तीव्र होती, बाल्यकाल से ही मेरी यह प्रवृत्ति।
निःस्वार्थ भाव से होती यह प्रवृत्ति, हर जीव प्रति मेरी होती ये वृत्ति।।

भेद-भाव रहित होती मेरी प्रवृत्ति, मैत्री प्रमोद कारुण्य माध्यस्थ वृत्ति।
हर जीव सुखी रहे मेरी भावना, किसी के प्रति न मेरी दुष्ट भावना।।

तन-मन इन्द्रियों से हो सभी स्वस्थ, सज्जन ज्ञानी बनाने का होता प्रयास।
प्रेम संगठन से सभी करे विकास, आध्यात्मिक उन्नति हो परम लक्ष्य।।

मन वचन काय से मैं करूँ प्रयास, कृत कारित अनुमत से करूँ विशेष।
अध्ययन अध्यापन व लेखन द्वारा, प्रवचन शिविर व संगोष्ठी द्वारा।।

अनुभव से देता हूँ शिक्षा विशेष, सत्य समता व शांति से सहित।
स्व-पर हित हेतु मैं करूँ प्रयास, अन्य के अनुभव भी लेता विशेष।।

अन्य को प्रोत्साहित व प्रेरित करूँ, पुरस्कार प्रशंसा सह सुधार करूँ।
दोष दूर हेतु ही मैं प्रयास करूँ, ईर्ष्या द्वेष घृणामय भाव न धरूँ।।

मेरी भावना का फल मुझे मिले भी, स्व-उपकार करते अन्य जन भी।
पहले कुछ जन न समझ पाते, धीरे-धीरे मेरे भाव समझ पाते।।

अन्य से मेरा भाव होता है भिन्न, व्यवहार भी मेरा होता है भिन्न।
अतः शीघ्र मुझे न समझ पाते, स्व-उपकार से वे वंचित होते।।

सभी सुखी रहे यह मेरी भावना, ना समझने पर न होती कुभावना।
मेरी भावना को समझे अन्य भी जन, ऐसी भावना भाता है ''कनक श्रमण''।।

मुझे नहीं चाहिए

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : छोटी-छोटी गैया....., शत-शत वंदन....., भातुकली.....)

ख्याति पूजा लाभ सभी लन्द-फन्द, मुझे न चाहिए क्षुद्र-मतवाद।
राग-द्वेष-मोहकर सभी भाव काम, भेद-भाव उत्पादक सभी काम।।

मुझे तो चाहिए सत्य-साम्य-सुख, आत्मविश्वास ज्ञान चारित्र युक्त।
उदार सहिष्णु विश्वहितकर, पावन भाव व सभी व्यवहार।।

मोह युक्त करुणा भी नहीं चाहिए, शुभ से शुद्ध करुणा मुझे चाहिए।
हठाग्रह पूर्वाग्रह (भी) नहीं चाहिए, अपूर्वार्थ सम्यग्ज्ञान मुझे चाहिए।।

संकीर्ण सामाजिक नीति-नियम, रूढ़ि परंपरा व अन्धा कानून।
अंधी आधुनिकता व ढोंग-पाखण्ड, ईर्ष्या द्वेष घृणा युक्त धार्मिक काम।।

अपेक्षा-उपेक्षा व संक्लेश युक्त, आकर्षण-विकर्षण-दिखावा युक्त।
धनी-गरीब व छोटा-बड़ा विभेद, धन-जन-नामकर समस्त काम।।

परनिन्दा अपमान अहितकर, पर-निमित्त सर्व खोटे विचार।
पर से संचालित न होना चाहता, आत्मानुशासी धैर्यशील होना चाहता।।

भौतिक निर्माण विज्ञापन प्रसिद्धि, भेड़-भेड़िया चाल अंधानुकरणवृत्ति।
लोकापवादकर आत्मग्लानि की वृत्ति, नवकोटि से त्याग करूँ संक्लेश वृत्ति।।

निष्पक्ष निराडम्बर व संतोषकर, सहज सरल शांत पावनकर।
आत्मविशुद्धिकर भाव व काम, 'कनक' चाहे ज्ञान-ध्यान व मौन।।

द्वयगुरुगुण-स्मरण

(मेरे आद्य-मार्गदर्शक गुरु आचार्य विमलसागरजी-गुरुदेव व आचार्य भरतसागरजी गुरुदेव)

(आचार्य द्वय का सान्निध्य मध्य-मध्य में 1975 से 1989 तक प्रायः 7 वर्ष रहा व आचार्य भरतसागरजी गुरुदेव के साथ अंतिम वात्सल्य मिलन 2004 (राज.) नरवाली में हुआ)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : वसन्ततिलका.....)

विमलसागर गुरु मम प्राण प्यारे! सरल हृदयी गुरुवर सबसे हो न्यारे!
वात्सल्यमूर्ति सुधीर सुशान्त गम्भीर, शिष्यानुग्रहे कुशल आचार्य प्रवर।। (1)

(राग : हे! दीनबंधु....., दे दी हमें आजादी.....)

हे! विमलसिन्धु हे! दया के सागर हे! वात्सल्यसिन्धु हे! ज्ञान के सागर।
हे! मम उपकारी हो आद्य-मार्गदर्शक, शिक्षा-दीक्षा आदि के आप सहायक।। (2)

आपकी निश्रा मैं रहा हूँ मैं अनेक बार, सम्मेदाचल व सोनागिरी में दो-दो बार।
मेरी दीक्षा के अवसर पर बेलगोल में (1981), सहस्राब्दी महोत्सव के अवसर में।। (3)

विद्यानन्द सूरी व ममगुरु कुन्थुसागर, द्विशताधिक साधु व लाखों नारी (व) नर।
मेरी श्रमण दीक्षा के पावन अवसर पर, आपका वरद आशीष (रहा) मेरे सिर पर।। (4)

आपके सुशिष्य भरतसागर गुरुवर, मेरे हितैषी व ज्ञानदातार ऋषिवर।
शंकासमाधानकर्त्ता प्रोत्साहक गुरुवर, दीर्घकाल रहा आशीष सिर पर।। (5)

धर्मस्थल में भी रहा सान्निध्य आपका (1983), श्री बाहुबली प्रतिष्ठा महोत्सव काल का।
पुनः सोनागिरी में सान्निध्य आपका (1989), वात्सल्य-स्रोत बहा मिलन से आपका।। (6)

आदेश दिया आपने मुझे वहाँ पर, सभी साधुओं को पढ़ाने का समयसार।
अर्द्धशत साधुओं को पढ़ाया वहाँ पर, द्रव्यसंग्रह सहित दिन में दो बार।। (7)

कलिकाल समंतभद्र आपने मुझे कहा, भरतसिन्धु ने भी मुझे ऐसा ही कहा।
आर्षमार्ग रक्षा हेतु आशीष भी दिया, नवीन कृति रचने का आदेश भी दिया।। (8)

'विश्वविज्ञान रहस्य' 'जिनार्चना द्वय', 'पुण्य पाप मीमांसा व निमित्त उपादान।'
'अनेकान्त सिद्धांत' आदि कृति की रचना, आपके आशीष
/(आदेश) से हुई मुझसे ये रचना।। (9)

वात्सल्य रत्नाकर में छपे मेरे लेख, मेरे द्वारा ग्रंथ का कुछ हुआ संशोधन।
गुरु भरत से मुझे मिले ये आदेश, सोनागिरी में संशोधन हुआ कुछ ही अंश।। (10)

आपके आदेश निर्देश आशीष के द्वारा, साहित्य लेखन प्रारंभ हुआ मेरे द्वारा।
आपके समान सरल व सुशांत मैं बनूँ, तव गुण प्राप्ति हेतु 'कनक' मैं तुम्हें प्रणमूँ।। (11)

मेरे (आचार्य कनकनन्दी) की प्रतिज्ञा, ससंघ के नियम व कारण

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : तेरे प्यार का आसरा.....)

ब्रह्मचारी क्षुल्लक मुनि दीक्षा में, व्रत लिया हूँ मैं गुरु साक्षी में।
सम्मेदाचल (1988) में ली ग्यारह प्रतिज्ञाएँ, बहु अवसर पर बहु प्रतिज्ञाएँ।।

(1) जन्म जयंती नहीं मनाने के कारण

जन्म-जरा-मरण नाश के लिए, साधु मैं बना हूँ (मैं) मोक्ष के लिए।
अतः जन्म जयंती नहीं मनाता हूँ, दीक्षादि जयंती भी नहीं मानता हूँ।। (1)

(2) पूर्व गृहस्थ संबंध त्याग के कारण

गृहत्यागी ब्रह्मचारी जब से बना हूँ, गृहस्थ अवस्था से विरक्त हुआ हूँ।

क्षुल्लक की ग्यारह प्रतिमा धरा हूँ, अनुमत उद्दिष्ट भी गृह से त्यागा हूँ।। (2)

दिगम्बर साधु-व्रत जब से धरा हूँ, अलौकिक अनागार आचार धरा हूँ।
नवीन नामकरण गुरु ने किया है, गृहस्थ अवस्था के संबंध/(मोह) त्यागा है।। (3)

पंचरमेष्ठी ही बंधु है मेरे, वैश्विक कुटुम्ब के विचार मेरे।
रत्नत्रय ही है वैभव मेरे, मोक्ष महल ही है मकान मेरे।। (4)

(3) याचना, भौतिक निर्माण आदि नहीं करने का कारण

मुमुक्षु-भिक्षुक हूँ मैं नहीं भिखारी, सर्वपरिग्रहत्यागी साम्य धारी।
अतः मैं याचना या चंदा न करूँ, भौतिक निर्माण हेतु भी कुछ न करूँ।। (5)

(4) प्रसिद्धि आदि नहीं चाहने का कारण

आत्मा की सिद्धि हेतु साधु मैं बना, राग-द्वेष-मोह ममत्व त्यागा।
अतः मैं ख्याति-पूजा-प्रसिद्धि त्यागा, निस्पृह निराडम्बर समता भोगा।। (6)

(5) भेदभावपूर्ण विद्वेष-विघटन व्यवहार नहीं करने का कारण

समता साधक मैं श्रमण बना, संकल्प-विकल्प-संक्लेश त्यागा।
सभी में सदाकाल ही समता भाव, अतः न मेरा-तेरा विभाव भाव।। (7)

(6) ढोंग पाखण्ड-दबाव प्रलोभन आदि से दूर रहने के कारण

आत्मविश्वास-ज्ञान-चारित्र धर्म, इससे विपरीत होता अधर्म।
ढोंग-पाखण्ड आडम्बर दंभ को त्यागा, दबाव प्रलोभन भय को त्यागा।। (8)

(7) पत्रिका विज्ञापन आदि नहीं करने के कारण

पत्रिका विज्ञापन या निमंत्रण, धन-जन-मान व दिखावा काम।
माईक-मंच व पण्डाल तामझाम, नौकर चौका व गाड़ी सामान।। (9)

इत्यादि कार्य हेतु मैं नहीं कहता, अनावश्यक हेतु मना करता।
सहज आगमोक्त जो कार्य होता, निस्पृह-समता से मैं प्रवृत्त होता।। (10)

(8) निस्पृह वृत्ति के कारण

कर्तृत्व वर्चस्व व प्रसिद्धि हेतु, कोई न काम करूँ संक्लेश हेतु।
निस्पृह आकिंचन्य निःस्वार्थ युक्त, काम करूँ मैं कृतज्ञता युक्त।। (11)

संस्थादि का नामकरण मेरा न करता, सहयोगी दाताओं का नाम लिखता।
ऐसा ही पूरा संघ के नियम होते, समता शांति सहयोग से रहते।।। (12)

(9) देश-विदेश में धर्म प्रचार के साधन

ध्यान-अध्ययन व लेखन प्रवचन, शिविर संगोष्ठी व साहित्य प्रकाशन।
देश-विदेशों में धर्म (ज्ञान) का प्रचार, संघ में होता है सहज प्रचुर।। (13)

स्वेच्छा से सहभागी होते हैं भक्तजन, सहयोग करते वे तन व मन।
समय-श्रम व धन भी लगाते, देश-विदेशों के भक्त ये करते।। (4)

सहज-सरल व समता-शांति से, सुयोग्य द्रव्य-क्षेत्र-काल व भाव से।
मेरी प्रतिज्ञा व संघ के नियम कहा, कनकनन्दी को आध्यात्म भाया।। (15)

विषयानुक्रमणिका

अ.क्र.	विषय	पृ.क्र.
1.	आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव की गीताञ्जली धाराएँ	2
2.	ज्ञान-विज्ञान-आनंद का वसन्त आया	3
3.	हमारे ससंघ की दैनन्दिनी	3
4.	आचार्य कनकनन्दी ससंघ के दैनिक कार्यक्रम	4
5.	स्वाध्याय तपस्वी गुरुवर निराले	5
6.	वैज्ञानिक श्रमणाचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव प्रणीत वैज्ञानिक संगोष्ठी की महिमा	6
7.	अपूर्व व अलौकिक कार्य करना है मुझे	7
8.	मेरी परोपकारी भावना सफल हो	8
9.	मुझे नहीं चाहिए	8
10.	द्वय-गुरु-गुरुस्मरण	9
11.	मेरी (आ. कनकनन्दी) की प्रतिज्ञा, ससंघ के नियम व कारण	10
	स्वाध्याय-गीताञ्जली	
1.	सरस्वती वंदना	16
2.	स्व-पर-विश्वहितकारी जिनवाणी	16
3.	विद्या तेरी धारा अमृत	17
4.	शिक्षा तेरी धारा है अजस्र	17
5.	पञ्च-परमेष्ठी स्तुति	18
6.	तीर्थंकरों से मुझे प्राप्त शिक्षाएँ	19
7.	भगवान् के नामानुसार गुण	20
8.	स्वाध्याय परमतप क्यों?	21
9.	स्वाध्याय परमः तपः	22
10.	भावश्रुतज्ञानी परोक्ष केवलज्ञानी	23
11.	स्वाध्याय से बहुआयामी लाभ	25
12.	ज्ञानार्जन की पद्धति	26
13.	मेरी परम शिक्षाएँ	27
14.	स्वाध्याय इह-परलोक व मोक्ष प्रदाता, न कि पढ़ाई	27
15.	जैन सिद्धांत समझना क्यों होता है क्लिष्ट	28
16.	जैनागम समझने में क्यों होता कठिन!?	29

17.	अनंत भूत-वर्तमान व अनंत भविष्य संबंधी मेरा स्व-अध्ययन	31
18.	महान् से महानतर तथा महानतम उपलब्धि	32
19.	हे! जीव कब तक पर-परिणति में उलझेगा	32
20.	मेरा एकांतवास मौन व कथन के कारण	33
21.	स्व-दोष परिज्ञान के उपाय व फल	36
22.	कठोर भी गुरुवचन से भव्य जीव विकसित होता	37
23.	मोही की सर्व-अवस्था विभ्रम-स्वरूप	38
24.	हठग्राही (पूर्वाग्रही, मिथ्यादृष्टि) सत्य को नहीं मानता	39
25.	वैज्ञानिक ब्रह्माण्डीय ज्ञान से प्राप्त शिक्षाएँ	41
26.	मेरी आध्यात्मिक-भावना (स्वरूप)	42
27.	स्व-पर चतुष्ट्य सिद्धांत	42
28.	आत्मोपलब्धि ही सर्वोपरि	43
29.	मेरी आत्म-आलोचना	44
30.	आत्म-सम्बोधन	45
31.	अपूर्व व अलौकिक कार्य करना है मुझे	46
32.	मेरा परिचय	46
33.	मैं हूँ परम सत्तावान्	48
34.	मैं स्वरूपतः सत्य एवं स्वभाव से सिद्ध	48
35.	स्व-शुद्धात्म के विश्वास ज्ञानाचरण ही मोक्षमार्ग	50
36.	धार्मिक के तीन लक्षण	51
37.	गरिमामय-व्यक्तित्व के हेतु	51
38.	स्वयं का मूल्यांकन मैं स्वयं भी करूँ	52
39.	आत्मज्ञ होता है सर्वज्ञ	53
40.	आवश्यकता नहीं है-भगवान् को मनाने की	54
41.	चतुर्थकाल की साधना पंचमकाल में निषेध	55
42.	दान-सेवा-परोपकार से सुख व स्वास्थ्य लाभ	57
43.	सप्त तत्त्व चिन्तन	58
44.	माता जिनवाणी के निश्चय व्यवहार प्रतीक स्वरूप	58
45.	विभिन्न विषय ज्ञान से विविध लाभ	59
46.	स्वात्माभिमुख संवित्ति : है श्रुतज्ञान	60
47.	स्वाध्याय का स्वरूप एवं फल	61

48.	स्वाध्याय का स्वरूप-विषय एवं फल	61
49.	''धार्मिक विकृतियों को दूर करने हेतु माँ जिनवाणी से प्रार्थना''	63
50.	''पढ़ाई > अध्ययन > स्वाध्याय''	64
51.	आचरण व अनुभव बिना पुस्तकीय ज्ञान से हानि	64
52.	शिक्षा की गाथा-व्यथा-आत्मकथा	65
53.	छोटा भोला छात्र हूँ	66
54.	''मेरी ज्ञानार्जन पद्धति''	67
55.	''मेरी भावना-परम ज्ञान हेतु मुझे चाहिए स्व-ज्ञान''	69
56.	प्राचीन गौरव-आधुनिक बोध से हे भारतीय! पुनः विश्वगुरु बनो!	69
57.	सुविद्या एवं कुविद्या का स्वरूप एवं फल	70
58.	श्रुतपञ्चमी महोत्सव	71
59.	स्वाध्याय का स्वरूप एवं फल	72
60.	परमात्मा के आशीर्वाद प्राप्त करने के उपाय व फल	73
61.	परम सत्य की दृष्टि से बिग-बैंग व जीव उत्पत्तिवाद टाईम व स्पेस सिद्धांत भी असत्य	74
62.	सारे जहाँ से अच्छा गुरुकुल है हमारा	76
63.	पावन चार भावनाएँ	76
64.	हमको है अभिमान	77
65.	धर्म-दर्शन-विज्ञान शिविर का महत्व	77
66.	आध्यात्मिक शक्ति का संवर्धन करूँ	78
67.	मैं हूँ (आ. कनकनन्दी) प्राथमिक विद्यार्थी क्योंकि	79

स्वाध्याय-गीताञ्जली

सरस्वती वंदना

(चाल : ओमकार स्वरूपा....., भातुकली....., हाँ तुम बिलकुल ऐसी हो....., क्या मिलिये....., सायोनारा....., तुम दिल की धड़कन.....)

अज्ञान-नाशिनी ज्ञान-प्रदायिनी...सरस्वती मात को सदा नमन...
केवल बोधि की परोक्ष भूता...भवभय भञ्जनी तुम्हें नमन...
तुम्हें नमन...सदा नमन...(1)

मोहतम हारिणी सत्य प्रकाशिनी...द्रव्य-तत्त्व की सुबोधिनी...
आत्म/(तत्त्व) बोधिनी मोक्ष प्रदर्शिनी...भव्य कमल की विकासिनी...(2)

भेद-ज्ञान दात्री विश्व तत्त्व बोधिनी...अनेकांतमय दिव्यवाणी...
सुदृष्टि दायिनी समता प्रदायिनी...सहिष्णु क्षमा की प्रबोधिनी...(3)

गुणस्थान मार्गणा स्थान बोधिनी...ध्यान-वैराग्य की संबोधिनी...
भावश्रुतमय आत्म स्वरूपिणी...'कनक' की ज्ञान प्रदायिनी...(4)

स्व-पर-विश्वहितकारी जिनवाणी

(चाल : चन्दा मामा दूर के....., शत-शत वंदन.....)

सबसे प्यारी श्री जिनवाणी, सबसे न्यारी आगम वाणी।
स्व-पर-विश्वहितकारी वाणी, स्वर्ग-मोक्षदायिनी वाणी।। (1)

द्रव्यतत्त्व पदार्थ बखानी, अनेकांत स्याद्वाद की वाणी।
पुण्य-पाप हेय-देय की वाणी, बंध-मोक्ष की आप सुवाणी।। (2)

आपने बताया अहिंसा-धर्म, विश्वशांति का परम मर्म।
अपरिग्रहवाद को आप बताया, पर्यावरण रक्षा मर्म बताया।। (3)

अनेकांत है वैश्विक-सूत्र, सर्व समस्याओं का निवारण-सूत्र।
परम कथन है स्याद्वाद वाणी, उदार सापेक्ष समन्वय वाणी।। (4)

षट् द्रव्यमय विश्व बताया, अकृत्रिम शाश्वत सत्य बताया।
उत्पाद-व्यय-ध्रौव्यमय बताया, जीव-अजीवमय बताया।। (5)

रत्नत्रयमय मोक्षमार्ग बताया, आत्म स्वभाव ही रत्नत्रय कहा।
आत्मविश्वास ज्ञान चरित्रमय, व्यवहार-निश्चयमार्ग यह।। (6)

दशलक्षण यह धर्म स्वरूप, समिति गुप्ति व ध्यान स्वरूप।
इसी से परम मोक्ष मिलता, 'कनक' सेविता आप हो! माता।। (7)

विद्या तेरी धारा अमृत

(तर्ज : गंगा तेरा पानी अमृत.....)

विद्या तेरी धारा अमृत, झर-झर बहती जाए
युगों-युगों से भारत जनता तुझसे अमृत पाए...विद्या तेरी धारा...(टेक)

तीर्थेश हिमालय से तू निकसी, गणधर प्रवाहित धारा
ऋषि मुनि पाठक सूरी सेवित निर्मल धारा ऽऽऽ
ज्ञानी-विज्ञानी-प्रजाजन भी तुझसे जीवन पाए...विद्या तेरी धारा...(1)

अध्यात्म तेरी मुख्य धारा, नद प्रवाहित मंदाकिनी
भिन्न-भिन्न नदी प्रवाहित धारा, भाषा गणितमयी ऽऽऽ
विज्ञान शिल्पी आयुर्वेदमयी संगीत विभिन्न धारा...विद्या तेरी धारा...(2)

संस्कार संस्कृति दया उदारता पवित्र बहती धारा
अनन्त हुए संतृप्त तेरे द्वारा, पावन हुए अनन्ता ऽऽऽ
तुझसे भारत हुआ विश्वगुरु, पूजित सभ्य संसार...विद्या तेरी धारा...(3)

तेरी पवित्र धारा में अब, बहती विकृति धारा
संकीर्ण स्वार्थ व भौतिकता की बहती गटर धारा ऽऽऽ
परस्पर भेद विद्वेष बांध से, रुकी तुम्हारी धारा...विद्या तेरी धारा...(4)

पुण्य पुरुषार्थी भागीरथी जागो, करो हो विकृति दूर
स्वयं तृप्त हो, तृप्त भी कराओ, भारत संतान सारा ऽऽऽ
विश्व संतान को तृप्त हेतु तुम, विस्तार पवित्र धारा...विद्या तेरी धारा...(5)

''शिक्षा तेरी धारा है अजस्र''

(लौकिक शिक्षा से जीविका निर्वाह तो अलौकिक से निर्माण)

(राग : गंगा तेरा पानी अमृत....., आत्मशक्ति से ओतप्रोत.....)

शिक्षा तेरी धारा अजस्र...सर्वत्र बहती जाये।
तेरे ही कारण मानव जाति...सबसे श्रेष्ठ कहाये।।ध्रु.।।

लौकिक तथा अलौकिक तेरी...बहती प्रमुख धारा।
लौकिक है दैहिक भौतिक...अलौकिक आत्मिक धारा।।
लौकिक से भी अधिक श्रेष्ठ...अलौकिक आत्मिक धारा।। (1)

लौकिक है भाषा गणित (मई)...कला वाणिज्य विज्ञान।

खगोल भूगोल रसायन भौतिक...इतिहास आयुर्वेद ज्ञान/(धारा)।
संगीत कला शिल्प उद्योग...यांत्रिक राजनीति ज्ञान।। (2)

इसीसे जीविका निर्वाह होता...भौतिक होता विकास।
सभ्यता का विकास होता...समाज होता विकास।
किन्तु इसीसे आत्मतत्त्व/(मानव) का...नहीं होता विकास/(है निर्वाण)।। (3)

आत्मतत्त्व के विकास हेतु...धारा अलौकिक शिक्षा/(धारा)।
सत्य अहिंसा ब्रह्मचर्य व...अपरिग्रह की दीक्षा।
संयम तप आत्मानुशासन...ध्यान वैराग्य निष्ठा।। (4)

इसीसे मानव महामानव से...बनता है परमात्मा।
इसे ही कहते सत्य शिव सुंदर...मोक्ष निर्वाण शुद्धात्मा।
यह ही जीव की परम अवस्था...जो है मुक्तावस्था।। (5)

''सा विद्या या विमुक्तये''...इसीसे प्रसिद्ध हुआ।
''सा विद्या या भुक्तये''...अभी तो प्रसिद्ध हुआ।
इसी कारण मानव आज...अधिक संत्रस्त हुआ।। (6)

लौकिक परे अलौकिक शिक्षा...प्राप्त करो हे मानव!
जिससे तेरा सर्वोदय होगा...नहीं रहेगा तनाव।
इसी हेतु ही 'कनकनन्दी'...रची है शिक्षा का काव्य।। (7)

पञ्च-परमेष्ठी स्तुति

(चालः तुम दिल की धड़कन में....., सायोनारा.....)

(1) अरिहंत स्तुति...

घाति कर्म नाश कर सर्वज्ञ जो बने,
परम/(संपूर्ण) सत्य बताकर, हितोपदेशी जो बने।
आत्मा को परमात्मा बनाने का, मार्ग जो बताये,
उनके गुण प्राप्ति हेतु, शिर को नित्य नमाये।।

(2) सिद्ध स्तुति...

सम्पूर्ण कर्म नाश कर, सिद्ध जो बने हैं,
अनन्त ज्ञान दर्शन सुख, वीर्य को जो धरे हैं।
अमूर्त अव्ययी अक्षय, अनंत गुण के धारी,
अनंतानंत सिद्धों को, हो वंदना हमारी।।

(3) आचार्य स्तुति...

छत्तीस मूल गुणधारी, स्व-पर मत के हो ज्ञाता,
लोकज्ञता गुण सह, तात्कालीन ज्ञान के ज्ञाता।
शिक्षा-दीक्षा-प्रायश्चित्त, विविध विधा के सुज्ञाता,
नमन उन्हें हो हमारे, अपरिस्रावी जो प्रशास्ता।।

(4) उपाध्याय स्तुति...

पच्चीस मूल गुण के धारी, स्व-पर मत के हो ज्ञाता,
पठन-पाठन-चिन्तन सह, तात्कालीन ज्ञान के दाता।
मिथ्यावाद तम हर सूर्य, प्रखर प्रज्ञा के धारी,
आध्यात्मिक ज्ञान प्राप्ति हेतु, तिन पद ढोक हमारी।।

(5) साधु (मुनि) स्तुति...

रत्नत्रय विभूषित आपका, दिगम्बर है रूप,
आत्म साधना में सतत, रत रहते मौन स्वरूप।
ज्ञान-ध्यान-तपोरक्त, समता-शांति सहित,
जीवन्त है मोक्षमार्ग, स्वरूप को नमन सतत।।
अरिहन्त-सिद्ध देव हमारे, परमात्मा हैं सुदेव,
सूरी पाठक साधु हमारे, पूज्य होते गुरुदेव।
सिद्ध-साधक रूप में है, पंच-परमेष्ठी भगवन्त,
वन्दन उन्हें हमारे सदा, प्राप्ति हेतु गुण अनंत।।

तीर्थंकरों से मुझे प्राप्त शिक्षाएँ

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : ऐ मेरे दिल नादाँ....., तुम दिल की धड़कन.....)

आत्मन् तुम शिक्षा लो...तीर्थंकर-सिद्धों से...
वे थे राजा-महाराजा-चक्री...तो भी राज-पाट छोड़े...
सत्ता संपत्ति प्रसिद्धि भोगों से...वे सर्वथा मोह छोड़े...
परिवार मित्र प्रजा से...वे सर्वथा राग छोड़े...आत्मन्...(ध्रुव)...

देवों की सेवा-सहायता...से कभी न आसक्त हुए...
अज्ञानी-मोही-दुष्ट-वैरी...से भी कभी न रूष्ट हुए...
चौसठ ऋद्धियों से सम्पन्न...हुए जब वे मुनि बने...

मनःपर्ययज्ञानी हुए...जब विरक्त साधु बने...आत्मन्...(1)

तो भी ऋद्धि व ज्ञान का...उन्होंने न प्रयोग किये...
ख्याति-प्रसिद्धि लाभ न चाहे...नहीं वे प्रवचन किये...
गृहस्थी के धन-जन-पद...का वे नहीं प्रयोग किये...
देवों के सहयोग को भी...न चाहे निस्पृह बने...आत्मन्...(2)

निस्पृह समता-ध्यान से...जब केवल ज्ञानी बने...
प्रभावित हुए तीन लोक...विश्व में प्रसिद्ध बने...
देवों द्वारा हुई रचना...समवशरण दिव्य सभा...
रत्न निर्मित समवशरण/(धर्मसभा)...में बनी बारह सभा...आत्मन्...(3)

गणधर ऋषि मुनि श्रावक...श्राविका इन्द्र चक्रवर्ती...
धर्मसभा में श्रोता बनकर...विराजे देव व पशु भी...
शत इन्द्र भी बने भक्त...विद्याधर व चक्रवर्ती...
तथापि वे रहे विरक्त...जिससे मिली उन्हें मुक्ति...आत्मन्...(4)

सिद्ध बनकर वे बने...अनंत गुणों के धनी...
आत्मा में ही लीन हो गये...ऐसे वे अनंत ज्ञानी...
तुम भी ये शिक्षा ले लो...तथा बनो लक्ष्यनिष्ठ...
निस्पृह निराडम्बर...समता-शांति में तिष्ठ...आत्मन्...(5)

मोही रागी कामी स्वार्थी...अज्ञानी सम न बनो...
ख्याति पूजा लाभ प्रसिद्धि...आदि को मल सम मानो...
तुम तो केवली सिद्ध हो...स्व-स्वभाव रूप से...
उसे ही प्राप्त करना है...'कनक' शुद्ध रूप से...आत्मन्...(6)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 25.01.2015, मध्याह्न 1.08

आध्यात्मिक में व्याकरण-संबंध संबंधी कविता

भगवान् के नामानुसार गुण

(पर्यायवाची शब्दों के अर्थ में भी भिन्नता)

(राग : तुम दिल की धड़कन....., भातुकली....., सायोनारा.....)

वाच्य-वाचक होता संबंध, वाच्य अनुसार होता वाचक।
द्रव्य में होते हैं, अनेक गुण, अतएव वाचक भी होते अनेक।। (स्थायी)

भले पर्याय वाचक शब्द भी हो, न होते एकांतः एक ही समान।
उसमें भी सूक्ष्म होता अंतर, गुण-पर्यायों में यथा अंतर।। (1)

भगवान् के भी यथा नाम अनेक, हर नाम के भी होते अर्थ पृथक्।
स्वयंभू[1] होते हैं स्वयं से उत्पन्न, संभव[2] होते हैं सुख से उत्पन्न।। (2)

शिव[3] होते हैं मोक्ष या आनंद, सनातन[4] अतः आप हो शाश्वत।
शुद्ध[5] हो तथा आप परम पावन, बुद्ध[6] हो आप अनंत ज्ञानघन।। (3)

ब्रह्मा[7] हो आप गुणों से समृद्ध, परमेष्ठी[8] हो आप परम पद स्थित।
सर्वज्ञ[9] हो आप सभी के भी ज्ञाता, आत्मज्ञ हो तुम स्वयं के ही ज्ञाता।। (4)

विश्वज्ञ[10] हो आप विश्व के भी ज्ञाता, त्रिकालज्ञ[11] तीनों कालों के भी ज्ञाता।
परमात्मा[12] आप सर्वश्रेष्ठ आत्मा, मोक्षमार्ग प्रदर्शन आप हो विधाता[13]।। (5)

चिदानन्द[14] आप हो ज्ञानानन्द[15] आप, सच्चिदानन्द[16] व परमानन्द[17] आप।
ज्ञानवान् होने से आप भगवान्[18], 'कनक' का लक्ष्य बनना भगवान्।। (6)

स्वाध्याय परमतप क्यों?

(चाल : छोटी-छोटी गैया.....)

स्वाध्यायरत साधु महान् तपस्वी, स्वाध्यायी समान न अन्य तपस्वी।
भूत-वर्तमान व भविष्यत काल में, स्वाध्याय सम फल न अन्य तप में।। (1)

स्वाध्याय है स्व-आत्म-अध्ययन, विषय-कषाय-रिक्त आत्म का ज्ञान।
अष्ट-शुद्धि युक्त व विनय सहित, पंचविध, स्वाध्याय स्व-पर-हित युत।। (2)

स्वाध्याय से बहुविध होते हैं लाभ, अज्ञान निवृत्ति व ज्ञान का लाभ।
हितग्रहण व अहित निवारण, नवीन-नवीन संवेग-वर्द्धन।। (3)

पंचेन्द्रिय निरोध व त्रिगुप्ति गुप्त से, स्वाध्याय होता है एकाग्रमन से।
असंख्यातगुणी कर्म निर्जरा होती, सातिशय पुण्य प्रकृति बंधती।। (4)

लाख-करोड़ों भवों में अज्ञानी जीव, जितने कर्मों को करता विनाश।
ज्ञानी-मुनि उस कर्म पुंज को, अंतर्मुहूर्त में ही करते विनाश।। (5)

सर्वज्ञ की आज्ञा का पालन होता, ध्यान-अध्ययन मुख्य मुनि का होता।
अध्यापन व प्रवचन उत्तम होते, ज्ञान/(धर्म) का प्रचार प्रचुर होता।। (6)

भक्ति व प्रभावना उत्तम होती, ज्ञान-ज्योति भी प्रद्योत होती।
जीवन्त धर्मतीर्थ होता प्रवर्तन, मोक्षमार्ग का न होता विच्छेदन।। (7)

विनय से जो स्वाध्याय करता, प्रमाद से यदि विस्मृत होता।
तथापि परभव में सुफल देता, केवलज्ञान को प्रगट करता।। (8)

तीर्थंकर केवली व गणधर होता, बहुश्रुत आचार्य उपाध्याय होता।
आत्मविशुद्धि से श्रेणी आरोहण होता, कर्मों को नाशकर सिद्धत्व पाता।। (9)

अतएव ज्ञानदान महान् दान, सर्वज्ञ तीर्थंकर भी करते जो दान।
अतएव ज्ञानदान देय व ग्राह्य, 'कनकनन्दी' को भी लगे ये श्रेय।। (10)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 07.01.2015, रात्रि 8.24

स्वाध्याय परमः तपः

(स्वाध्याय का स्वरूप एवं फल)

(चाल : छोटी-छोटी गैया....., सायोनारा....., तुम दिल की धड़कन.....)

स्व-अध्ययन हेतु, अध्ययन आगम का, होता परम तप है।
राग-द्वेष-मोह क्षीण जब होता, होता परम तप है।। (स्थायी)

दर्पण में देह प्रतिबिम्ब दिखे, तथाहि आगम से आतम का।
स्व-आत्म गुण-दोष अध्ययन ही, परम लक्ष्य स्वाध्याय का।।

परम आगम सर्वज्ञ कथित, गणधर ग्रंथित होता है।
परम्पराचार्य द्वारा रचित, सापेक्ष कथन होता है।। (1)

द्रव्य तत्त्व व पदार्थों का, जब परिज्ञान होता है।
द्रव्य-गुण-पर्याय सहित, आत्म-परिज्ञान (भी) होता है।।

स्वयं को जब जाने सिद्ध समान, सच्चिदानंदमय है।
द्रव्य-भाव-नोकर्म विवर्जित, शुद्ध-बुद्ध आनंदमय है।। (2)

स्व-स्वभाव की प्राप्ति हेतु, जब अध्ययन करे आगम है।
पंचेन्द्रिय विषयों से रहित, एकाग्रता समता सहित है।।

ख्याति पूजा लाभ से रहित, संकल्प-विकल्प से रहित है।
ईर्ष्या घृणा तृष्णा विवर्जित, संक्लेश-द्वंद्व से रहित है।। (3)

पर निंदा अपमान रहित, उदार वात्सल्य सहित है।
स्व-पर-विश्व कल्याण भावयुत, संवेग वैराग्य सहित है।।

हठाग्रह पूर्वाग्रहों से रहित, प्रमाण नय सापेक्ष सह है।
अनेकान्तमय उदार दृष्टि से, सत्य तथ्य ग्रहण करता है।। (4)

आर्त्त रौद्र परिणाम विवर्जित, विनय शुद्धता सहित है।
इह-परलोक भोगाकांक्षा रहित, लोकानुरंजन से रहित है।।

ढोंग-पाखण्ड-मायाचार रहित, मद-मत्सर से रहित है।
युक्तियुक्त कार्य-कारण सहित, कुतर्क मिथ्यानय रहित है।। (5)

आगम में पाप-पापियों का वर्णन, होता बहुविध प्रकार है।
उसे जानकर पाप त्याग हेतु, पापफल वर्णन (होता) प्रचुर है।।

राग-द्वेष-मोह-विषय कषाय, पञ्च पाप सप्त व्यसन है।
इनके सेवक जीव होते हैं पापी, एकेन्द्रिय से असंज्ञी तक जीव हैं।। (6)

ऐसा ही अजीव द्रव्यों का वर्णन, होता है तत्त्व परिज्ञान हेतु।
धर्माधर्म पुद्गल आकाश काल का, वर्णन है तत्त्वश्रद्धान हेतु।।

यह स्वाध्याय है परम तपस्या, ज्ञान ज्योति उद्योतनकर है।
पाप विनाशक पुण्य सम्पादक, संवर-निर्जरा कारक है।। (7)

तीर्थंकर गणधर चक्रधर, वासुदेव इन्द्र महर्द्धिक दायक है।
शुद्ध-बुद्ध परमानंद दायक, 'कनक' भी 'स्वाध्याय' आराधक है।। (8)

भावश्रुतज्ञानी परोक्ष केवलज्ञानी

(केवलज्ञान प्रत्यक्षज्ञान तो श्रुतज्ञान परोक्षज्ञान)

(चाल : तुम दिल की धड़कन.....)

गाथा- जो पस्सइ अप्पाणं अबद्धपुट्ठं अणण्णमविसेसं।
अपदेशसुत्तमज्झं पस्सई जिण सासणं सव्वं।। (समयसार)

हिन्दी- जो स्वयं को जानता है, अबद्ध अस्पर्श व अन्य से भिन्न।
आत्मानुभव से या श्रुतज्ञान से, वह जानता जिनशासन पूर्ण।।

गाथा- सव्वं पि अणेयत्तं परोक्ख-रूवेण जं पयासेदि।
तं सुय-णाणं भण्णदि संसय-पहुदीहि परिचत्तं।। (का. अनु.)

हिन्दी- अनेकान्तमय सर्व द्रव्यों को, जो परोक्ष रूप से देखता है।
उसे ही श्रुतज्ञान कहते जो, संशय आदि से रहित होता है।।

गाथा- सुदकेवलं च णाणं दोण्णिवि सरिसाणि होंति बोहादो।
सुदणाणं तु परोक्खं पच्चक्खं केवलं णाणं।।

हिन्दी- श्रुतज्ञान व केवलज्ञान दोनों, समान है बोधदृष्टि से/(अवबोध से)।

श्रुतज्ञान तो परोक्षज्ञान, प्रत्यक्ष होता केवलज्ञान।।

श्लोक- स्याद्वादकेवलज्ञाने, सर्ववस्तु प्रकाशने।
भेदः साक्षादसाक्षाच्च ह्यवस्त्वन्यतमं भवेत्।। (आ. समंतभद्र)

हिन्दी- स्याद्वाद (श्रुत) केवलज्ञान से, सर्ववस्तु (द्रव्य) होते परिज्ञान।
भेद साक्षात् व परोक्ष होता, अज्ञात जो वह अद्रव्य होता।।

गाथा- जाणइ तिकालविसये, दव्वगुणे पज्जए य बहुभेदे।
पच्चक्खं च परोक्ख, अणेण णाणं त्ति णं वेंति।। (299, गो.जी.)

हिन्दी- द्रव्य गुण पर्याय बहुभेद से, जानता है त्रिकाल विषय।
प्रत्यक्ष या परोक्ष रूप से, उसे ही कहा जाता है ज्ञान।।

गाथा- सव्वे आगमसिद्धा अत्था गुणपज्जएहिं चत्तेहिं।
जाणंति आगमेण हि पेच्छिता ते वि ते समणा।

हिन्दी- आगम से सिद्ध है सभी अर्थ, विचित्र गुण पर्याय सहित।
जानते व पहचानते आगम से, वे ही सच्चे श्रमण है।।

रहस्य- ज्ञान-ज्ञेय सम्बन्ध प्रमाण, ज्ञेयों को जो जाने सो है ज्ञान।
विपरीत जाने सो मिथ्याज्ञान, सम्यक् जाने सो है सच्चज्ञान।। (1)

मोह युक्त ज्ञान होता है कुज्ञान, मोह से रहित होता सुज्ञान।
छद्मस्थ सुदृष्टि का परोक्षज्ञान, सर्वज्ञ का होता प्रत्यक्ष ज्ञान।। (2)

सर्वज्ञ को होता अनंतज्ञान, सर्व द्रव्यों का होता प्रत्यक्ष प्रमाण।
उनसे उपदिष्ट होता सो श्रुतज्ञान, यह ज्ञान है परोक्ष ज्ञान।। (3)

द्रव्यश्रुत से जो भावश्रुत होता, उससे द्रव्यों का ज्ञान होता।
द्रव्य तत्त्व व पदार्थों का होता, सम्पूर्ण नहीं आंशिक ही होता।। (4)

आत्मानुभवी जो श्रमण होते, आत्मानुभव से स्व को जानते।
स्व को अन्य से पृथक् जानते, सच्चिदानन्द (का) अनुभव करते।। (5)

द्रव्यश्रुत बिना भी यदि वे होते, तो भी भावश्रुत ज्ञानी वे होते।
आत्मज्ञान से होता पर का भी ज्ञान, जिसे कहते परम भेद-विज्ञान।। (6)

यदि न होता आत्म का ज्ञान, द्रव्यश्रुत से भी न भेद-विज्ञान।
जिससे उसका ज्ञान होता कुज्ञान, तोता-रटन्त या दिखावा ज्ञान।। (7)

इसीसे मोह भी न होता क्षीण, ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा न होते शमन।
अनेकान्त का न होता है मान्य, संकीर्ण कट्टरता से होता समपन्न।। (8)

आत्मज्ञान ही होता परमज्ञान, भावश्रुतमय सत्यार्थ ज्ञान।
आत्मज्ञान से होता सभी का ज्ञान, 'कनकनन्दी' चाहे केवलज्ञान।। (9)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 06.02.2015, रात्रि 12.18
(यह कविता आचार्य पद्मनन्दी के अनुरोध से बनी)

स्वाध्याय से बहुआयामी लाभ

(आचार्यश्री कनकनन्दी जी गुरुदेव संघस्थ की अद्भुत स्वाध्याय पद्धति व लाभ)

सृजक विद्यार्थी-श्रमण मुनि सुविज्ञसागर

(चाल : आधा है चन्द्रमा....., छोटी-छोटी गैया....., फिर छिड़ी बात.....(गजल).....)

स्वाध्याय परम तप गुणकारी...ज्ञान-विज्ञान बहुआयामी/(बहुविधायी)
स्वाध्याय परम तप...(ध्रुवपद)

जिससे स्वयं का होता अध्ययन...समग्र विकास के आयाम/(उपाय)...
वैश्विक गुरु कनकनन्दी...जिनकी पद्धति अद्भुत विभिन्न...
जिज्ञासु शोधार्थी/(विद्यार्थी) देशी-विदेशी...पाते ज्ञान-देशना निरन्तर...
स्वाध्याय परम तप...(1)

गणित कला न्याय राजनीति...शिक्षा मनोविज्ञान सर्वोदयी...
स्वास्थ्य लाभ-आध्यात्मिक बोध...व्यापक ज्ञान होता ब्रह्माण्डीय...
नवीनता सह प्रवीणता आती...प्रगतिशील निपुणता आती...
स्वाध्याय परम तप...(2)

व्यक्तित्व विकास जीवन प्रबंध...आधुनिक ज्ञान प्रेरणादायी...
अतिशय रस प्रसरण होता...शिक्षा-विज्ञान आनंददायी/(आह्लादकारी)...
श्रद्धा प्रज्ञा युत होता अनुभव...सत्य-साम्य सह सुखकारी/(शांतिदायी)...
स्वाध्याय परम तप...(3)

अज्ञान तम होता विनाश...स्व हिताहित का होता भान...
नवीन संवेग होते उत्पन्न...अपूर्वार्थ होता भावश्रुत...
द्रव्य-तत्त्व-अर्थ बोध होता...निष्कम्प बने 'सुविज्ञ' जन...
स्वाध्याय परम तप...(4)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, उदयपुर, दिनांक 09.01.2015, रात्रि 8.25

ज्ञानार्जन की पद्धति

(विद्यार्थी/शिष्य के कर्त्तव्य)

(राग : शत-शत वंदन....., भातुकली....., सुनो-सुनो हे.....)

सुनो हे ! शिष्य तुम्हें बताऊँ, ज्ञानार्जन की सही पद्धति।
जिससे तुम्हें ज्ञान मिलेगा, पाओगे सर्वांगीण उन्नति।। (1)

विनय-शुद्धि से सहित होकर, ज्ञानार्जन करो श्रेष्ठ गुरु से।
महान् उद्देश्य पवित्र भाव युत, प्रज्ञा-श्रद्धा व पुरुषार्थ से।। (2)

काल[1] विनय[2] व उपधान[3] सहित, बहुमान[4] अनिह्नव[5] व्यंजन[6] शुद्ध से।
अर्थशुद्ध[7] व उभयशुद्ध[8] सह, ज्ञान-ज्ञानदाता में विनय।। (3)

श्रवण[1] करने की इच्छा सह, शंका[2] निवारण विनय युत।
एकाग्रचित[3] से श्रवण युक्त, अर्थग्रहण[4] भी अधिगम सहित।। (4)

पूर्वापर सम्यक् पर्यालोचना[5], सत्य-तथ्य ज्ञान ग्रहण[6] युक्त।
धारणा[7] ज्ञान में सुदृढ़ चित्त, हित ग्रहण अहित त्याग सहित।। (5)

श्रवणविधि को विशेष जानो, मौन[1] व एकाग्रचित्त से सुनो।
विनयपूर्वक स्वीकृति[2] कहो, प्रसन्नपूर्वक सिर हिलाओ।। (6)

वन्दनापूर्वक गुरु को[3] बताओ, अपने सत्य-तथ्य बात बताओ।
प्रतिपृच्छा[4] करो सत्य ज्ञानार्थे, विमर्श[5] करो तथ्य के लिए।। (7)

प्रसंग[6] परायण मंथन हेतु, परिनिष्ठ[7] प्रतिपादन हेतु।
सूत्र पढ़ो सामान्य अर्थ सह, निर्युक्ति सहित सूत्र मिश्रित।। (8)

नयनिक्षेप प्रमाणादि सहित, अनेकान्त स्याद्वाद युक्ति से युक्त।
प्रायोगिक अनुभव ज्ञान सहित, ज्ञान हो उपकार से युक्त।। (9)

सात्विक सुपाच्य आहार योग्य, योगासन प्राणायाम सह व्यायाम।
सादा जीवन उच्च विचार, संक्लेश द्वंद्व व विकार मुक्त।। (10)

ज्ञानानुसार हो आचार पवित्र, विनम्र सत्यग्राही उदार युक्त।
स्व-पर-उपकारी आचार युक्त, अन्याय अत्याचार पापाचार रिक्त।। (11)

ज्ञानदाता गुरु से बनो कृतज्ञ, सेवा-विनय से करो गुण कीर्तन।
श्रुतज्ञान/(भावज्ञान) से पायो केवलज्ञान, इसी हेतु 'कनक' करे ज्ञानार्जन।। (12)

(यह कविता मूलाचार एवं नन्दीसूत्र से प्रेरित है)

मेरी परम शिक्षाएँ

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : छोटी-छोटी गैया....., सायोनारा.....)

अनेकान्त से मुझे शिक्षा मिलती, अनंत धर्मात्मक है वस्तु स्वरूप।
अनंत धर्ममय बनने हेतु, बनना है उदार व्यापक स्वरूप।। (1)

स्याद्वाद से मुझे शिक्षा मिलती, सत्य कथन करूँ सापेक्षमय।
पक्षपात दुराग्रह से भी रहित, स्व-पर-विश्व कल्याण सहित।। (2)

समता से मुझे शिक्षा मिलती, मोह-क्षोभ से रहूँ मैं परे।
संकल्प-विकल्प व संक्लेश त्यागकर, सहिष्णु क्षमा व शांति पुरस्सर/(परिपूर्ण)।। (3)

अपरिग्रह से मैं लेता हूँ शिक्षा, तन-मन-इन्द्रिय परे मम रूप।
द्रव्यभाव नोकर्म रहित हूँ, सत्ता-संपत्ति व प्रसिद्धि रिक्त हूँ।। (4)

अहिंसा से मैं लेता हूँ शिक्षा, कषाय-मोह से मैं बनूँ निर्लिप्त।
दश धर्म पंचव्रत समिति सहित, संक्लेश अध्यवसाय से बनूँ मुक्त।। (5)

परमसत्य से मैं लेता हूँ शिक्षा, सच्चिदानंदमय मेरा स्वरूप।
अनादि अनंत स्वयंभू स्वयंपूर्ण, 'कनकनन्दी' है मेरा अव्यय रूप।। (6)

स्वाध्याय इह-परलोक व मोक्ष प्रदाता, न कि पढ़ाई

(विनम्र-सत्यग्राही स्वाध्याय से प्राप्त ज्ञान को भूलने पर भी आगामी भव में फल को प्राप्त करता है)

(चाल : गंगा तेरा पानी अमृत....., आत्मशक्ति से....., सायोनारा.....)

विद्या तेरी धारा अमृत, झर-झर बहती जाये...
जन्म-जन्मान्तर व मोक्ष तक भी, तुम्हारा अमृत पाये...विद्या तेरी...(टेक)

सर्वज्ञ कथित आगम ग्रंथित, स्वाध्याय से तुझे जो (पीये)/पाये...
अज्ञान अंधकार नाश करके, ज्ञान ज्योति को (वे) पाये...ऽऽऽ
अहित त्यागे व हित को गहे, वे ही अमृत पाये...विद्या तेरी...(1)

सत्य-तथ्य व आत्म-परमात्मा, ज्ञान-ज्ञेय जो जाने...
आस्रव-बंध त्यागकर, जो संवर-निर्जरा गहे...ऽऽऽ
वे ही कर्म को नाश करके, अनंत सुख को पाये...विद्या तेरी...(2)

स्वाध्याय से जो ज्ञान प्राप्त कर, प्रमाद से भूल जाये...
आगामी भवों में उस संस्कार/(ज्ञान) से, पुनः ज्ञान को पाये...ऽऽऽ
मुनि बनकर आत्मसाधना से, अनंत-ज्ञान को पाये...विद्या तेरी...(3)

विनय से जो स्वाध्याय करे वे, उभय लोक सुख पाये...
परंपरा से मोक्ष प्राप्त कर, अनंत-सुख वे पाये...ऽऽऽ
अतएव स्वाध्याय परम-तपस्या, ऐसी जिनवाणी बताये...विद्या तेरी...(4)

लौकिक पढ़ाई से यह न संभव, जो उभय लोक सुख (देय)/देवे...
तथाहि मोही अज्ञानी लोभी, स्वाध्याय में चित्त न देवे...ऽऽऽ
कोई मतांध-स्वार्थी जन तो, आगम को लांछन लगावे...विद्या तेरी...(5)

विनम्र-सत्यग्राही होकर तेरी, अमृतधारा जो पीवे...
जन्म-मरण-आधि-व्याधि नशाके, अमृत-पद वे पावे...ऽऽऽ
इसी हेतु ही 'कनकनन्दी', ज्ञानामृत-रस सदा पीवे...विद्या तेरी...(6)

उक्तंच- विणयेण सुदमधिदं यदि वा पमादेण होदि विस्सरिदं।
तं आवहदि परभवे, केवल णाणं आवहदि।।
जिणवयण मोसदमिणं विसय सुहं विरेयण अमिद भूयं।
जर मरण वाहि हरणं खयकरणं सव्वदुःक्खाणं।। (दंसण पाहुड)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 08.02.2015, रात्रि 8.17
(यह कविता आचार्य पद्मनन्दी के अनुरोध से बनी)

जैन सिद्धांत समझना क्यों होता है क्लिष्ट?

(चाल : छोटी-छोटी गैया....., शत-शत वंदन....., सायोनारा.....)

सुना भोगा व अनुभव भी किया, हर जीव काम भोग बंध तत्त्व।
अतएव यह सब सहज आते, न सहज होता स्व-आत्म तत्त्व।। (1)

अनादिकालीन संस्कार-वशतः, जीवों के होते हैं अशुभ भाव।
काम-क्रोध-मोह-मद-मत्सर, ईर्ष्या-द्वेष-घृणा-तृष्णा विभाव।। (2)

आहार निद्रा व भय मैथुन, हिंसा प्रतिहिंसा व युद्ध संहार।
चोरी मिलावट व कूट-कपट, निन्दा अपमान व परिग्रह संग्रह।। (3)

द्रव्यकर्म भावकर्म व जिनोम, दिमाग हारमोन व वातावरण।
परिवार समाज व रीति-रिवाज, परंपरा संस्कार व भोजन-पान।। (4)

शिक्षा संगति व संकीर्ण विचार, सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि-आडम्बर।
फैशन-व्यसन संक्लेश के कारण, तत्त्वज्ञान होता अति-दुष्कर।। (5)

जीव तो चेतनमय मोह (कर्म) कारण, बनते है मोही व कुज्ञानी।
अतएव कुज्ञान होता सरल है, कुमति-श्रुत व अवधिज्ञानी।। (6)

कुज्ञान से जीव भी करते काम, आहार-निद्रा व भय-मैथुन।
प्रजनन आत्मरक्षण संग्रहण, लौकिक ज्ञान-विज्ञान प्रशिक्षण।। (7)
भाषा राजनीति कानून व्याकरण, कला संगीत व नृत्य भजन।
तर्क-वितर्क व स्वार्थ साधन, भौतिक यंत्र-उपकरण निर्माण।। (8)
इनसे परे है आगम का ज्ञान, जिससे होता है परमज्ञान।
आत्म-अनात्म का सच्चा विज्ञान, जिसे कहते वीतराग विज्ञान।। (9)
इसी हेतु विशेष प्रज्ञा चाहिए, जिस हेतु विशेष श्रद्धा चाहिए।
इसी हेतु क्षयोपशम चाहिए, मोह अनंतानुबंधी उपशम/(क्षयोपशम) चाहिए।। (10)
इसी से योग्यताएँ उत्पन्न होती, रूचि जिज्ञासाएँ प्रगट होती।
अध्ययन-मनन-स्मरण-ध्यान, जिससे ज्ञानार्थी बनता प्रवीण।। (11)
श्रद्धा से जो अध्ययन करता, मन्द क्षयोपशम से भूल भी जाता।
फल अवश्य उसे भी मिलता, आगामी भव में ज्ञानी भी बनता।। (12)
श्रद्धा विनय से अतः करो स्वाध्याय, यह है अंतरंग तप निश्चय।
तप से निर्झरा व मोक्ष मिलता, इसी हेतु 'कनक' स्वाध्याय करता।। (13)

संदर्भ- सुदपरिचिदाणुभुदा सव्वस्स वि कामभोगबन्ध कहा।
एयत्तसुहलंभो णवरि ण सुलह विहत्तस्स।। (समयसार)
आहारनिद्राभयमैथुनानि सामान्यमेतत्पशुभि नराणाम्।
ज्ञानं (धर्मः) विशेष खलु मानवानाम् ज्ञानेनविना पशुभि मानवाः।।
विरला विसुणहि तच्चं विरला जाणंति तच्चदो तच्चं।
विरला भावहि तच्चं विरलाणं धारणा होदि।। (279, का.अनु.)
तच्चं कहिज्जमाणं णिच्चल-भावेण गिण्हदे जो हि।
तं चिय भावेदि सया सो वि य तच्चं विया णेई।। (280, का.अनु.)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 09.02.2015, रात्रि 11.27
(यह कविता आचार्य पद्मनन्दी जी के कारण बनी)

जैनागम समझने में क्यों होता कठिन!?

(चाल : वंदे भारत जननी....., भातुकली.....)

जैनागम में वर्णित रहस्य क्यों होता है दुरूह/(कठिन) विशेष।
वर्णन उसका कर रहा हूँ, श्रुतदेवी को नमाय शीश।। (1)
परोक्ष केवलज्ञान है श्रुतज्ञान, जो अनंत अर्थ सहित होता।
केवलज्ञान तो प्रत्यक्ष होता, श्रुतज्ञान तो परोक्ष होता।। (2)

आगम में वर्णित पद-वाक्य-सूत्र नहीं होते लौकिक सम।
इनके अर्थ असामान्य होते, तथाहि रहस्य व वर्णन-क्रम।। (3)

संस्कृत-प्राकृत होती है भाषा, गणित होता है अलौकिक।
संस्कृत-प्राकृत भी न सामान्य, होती वे भी है अलौकिक।। (4)

करणानुयोग का वर्णन अलौकिक गणित में होता विशेष।
द्रव्यानुयोग का तो वर्णन, अलौकिक व (अत्यंत सूक्ष्म)/सूक्ष्म रहस्य।। (5)

अनादिकालीन कर्म-संस्कार से, जीव होते है मोही-अज्ञानी।
राग-द्वेष-काम-क्रोध से आवेशित, अलौकिक विषयों में होते अज्ञानी।। (6)

वर्तमान काल में दो ही ज्ञान होते, वे है मतिज्ञान व श्रुतज्ञान।
(मोही)/मिथ्यात्वी के होते हैं कुज्ञान, सुदृष्टि के होते (हैं) सुज्ञान।। (7)

पंचमकाल में अधिकांश मानव, नहीं होते हैं सम्यक् दृष्टि।
अतएव उनके ज्ञान भी होते, हैं कुश्रुत व कुमति।। (8)

जैनागम के अध्ययन में भी, नहीं रखते हैं विशेष रुचि।
लौकिक पढ़ाई-धनार्जन व, फैशन-व्यसनों में विशेष रुचि।। (9)

आगमज्ञाता सुयोग्य गुरु की, उपलब्धि भी न होती सरल।
उपलब्ध जब हो भी जावे, ज्ञानार्जन भी करते विरल।। (10)

पर्व-उत्सर्व व खाना-पीना में, अधिक लगाते है समय-शक्ति।
दिखावा-आडम्बर-संकीर्ण पंथ (मत) में, अधिकांश जन की होती रुचि।। (11)

सनम्र-सत्यग्राही हो आत्महित हेतु, नहीं करते आगम का स्वाध्याय।
ख्याति-पूजा-लाभ-पंथ-मत हेतु, कोई (कोई) करते आगम का अध्ययन।। (12)

पल्लवग्राही होते अधिकांश जन, अर्थाजन हेतु करते अध्ययन।
संकीर्ण-कट्टर पंथग्राही होकर, करते लेखन व प्रवचन।। (13)

इन सब कारणों से परम-विज्ञानमय, आगम से हो जाते वंचित।
स्व-पर व विश्व-कल्याण से, अतएव हो जाते हैं वंचित।। (14)

श्रद्धा-प्रज्ञा व विनय सहित, आगमज्ञ गुरु से करो ज्ञान।
सनम्र-सत्यग्राही एकाग्रमन से, बहुश्रुताचार्य से आत्म का ज्ञान।। (15)

इसीसे होगा सम्यग्ज्ञान जिससे, इह-परलोक में होगा कल्याण।
इसी हेतु ही 'कनकनन्दी' आगम का, करते अध्ययन व अध्यापन।। (16)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 18.01.2015, रात्रि 2.45

अनंत भूत-वर्तमान व अनंत भविष्य संबंधी मेरा स्व-अध्ययन

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : छोटी-छोटी गैया.....)

मेरा ही अध्ययन मैं कर रहा हूँ, श्रीजिनवाणी के द्वारा।
सर्वज्ञ कथित गणधर गुंथित, आचार्य रचित ग्रंथों द्वारा।।

गाथा- जीवो उवओगमओ अमुत्ति कत्ता सदेह परिमाणो।
भोत्ता संसारत्थो सिद्धो सो विस्सोड्ढगई।। (2 द्रव्य संग्रह)

(राग : जय हनुमान....., आत्मशक्ति....., शत-शत वंदन.....)

रहस्य- मैं हूँ जीव चेतनामय, अनंत-गुण-गण धारी।
अनादि कर्मबंध के कारण, बना हूँ शरीर धारी।।
तथाहि मेरा शुद्ध स्वरूप, होता है अमूर्तरूप।
आकाश यथा नीला दिखने पर, भी होता अमूर्तरूप।।
राग-द्वेष भाव-कर्म के कारण, बांधा हूँ द्रव्यकर्म।
तथापि मैं शुद्ध रूप से, होता हूँ चेतनापूर्ण।।
चौरासीलक्ष योनि मध्य में, धरा हूँ अनंत देह।
देह आकार में व्याप्त रहता हूँ, तो भी न होता मैं देह।।
पूर्व उपार्जित कर्मफल को, मेरा मैं भोग करूँ।
कर्ममुक्त होने के बाद, आत्मानंद को भोग करूँ।।
संसारावस्था में कर्म कारण, दुःखों को (मैं) भोग करूँ।
कर्मनाश होने के बाद, मुक्तानंद में रमण करूँ।।
संसारावस्था में कर्म के कारण, विभिन्न मेरी होती गति।
मुक्त होने पर स्वाभाविक, मेरी होती है ऊर्ध्वगति।।
अनंत काल संसार में बीता, अनंत दुःख मैंने सहा।
वर्तमान में साधु बनकर, साधना रत मैं हुआ।।
भविष्यत् में कर्मनाश कर, शुद्ध-बुद्ध व सुखी बनूँ।
शुद्ध सिद्ध अक्षय अनंत, काल आत्मिक सुखी बनूँ।।
यह ही मेरा अध्ययन व, साधना लक्ष्य श्रेय प्राप्य।
इसी हेतु ही 'कनकनन्दी', त्यागा है सर्व विकल्प।।

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 28.01.2015, रात्रि 10.53

महान् से महान्तर तथा महान्तम उपलब्धि

(आत्मविश्वास-आत्मज्ञान तथा आत्मोपलब्धि ही सर्वोत्तम उपलब्धि)

(चाल : वैष्णव जन तो तेणे कहिये.....)

सम्यग्दृष्टि जन तेणे कहिये जे, वस्तु स्वरूप/(सत्य स्वरूप) को माने रे!
स्वसत्ता-परसत्ता-महासत्ता सह, द्रव्य स्वरूप को माने रे!!(ध्रुवपद)!!

अनादिकाल से सत्य को न माना, जो सर्वज्ञों ने जाना है!
मोह अनंतानुबंधी कर्मोदये, अंधश्रद्धानी बना है!!

अनंत बार देव मानव बना, सत्ता-संपत्ति भोगा है!
ख्याति पूजा लाभ प्रसिद्धि चाहा, आत्मरूप में न जागा है!!

जिससे अनंत जन्म-मरण को पाया, अनंत दुःखों को भोगा है!
नरक निगोद पशु-पक्षी बनकर, उसे ही स्व-स्वरूप माना है!!

सुद्रव्य-क्षेत्र-काल-भव-भाव पाकर, सद्गुरु से (जब) सत्य जाना है!
आत्मविशुद्धि से आत्मा को जानकर, महान् उपलब्धि वाला बना है!!

इससे ही ज्ञान सुज्ञान होता है, भेद-विज्ञानी महान् होता है!
परम दार्शनिक परम वैज्ञानिक, महान् तत्त्ववेत्ता होता है!!

जिससे आचरण सम्यक् करके, आत्मध्यान शुक्ल किया है!
समस्त कर्मों को नाश करके, आत्मिक वैभव पाया है!!

आत्मोपलब्धि परम उपलब्धि, अनंत सुखादि को पाना है!
इसी हेतु ही 'कनकनन्दी' भी, स्व सत्ता/(सर्व विभाव) को जाना है!!

हे! जीया कब तक पर-परिणति में उलझेगा!?

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : जीया कब तक उलझेगा.....)

जीया! कब तक उलझेगा अनात्म भावों (अशुभ भावों/कषाय भावों/पर-परिणति /संक्लेश भावों) में।
राग-द्वेष-मोह-काम-क्रोधादि भावों में।।ध्रुव।।

धन-जन-मान व ख्याति-पूजा-लाभ में,
ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा व संकल्प-विकल्पों में,
शत्रु-मित्र-भाई-बंधु-अपना-पराया में,

आकर्षण-विकर्षण आदि अशुभ भावों में।।1।। जीया...

फैशन-व्यसन व आडम्बर-दिखावा में,
अहंकार-ममकार आदि संक्लेश भावों में,
तन-मन-इन्द्रिय हेतु उनके भोग-उपभोग में,
विषय-वासना में पर-परिणति रूप में।।2।। जीया...

संकीर्ण-कट्टरमय पंथ-मत व भावों में,
पूजा-पाठ-संत व ग्रंथ भाषा व जाति में,
राजनीति-कानून-शिक्षा-संविधान-राष्ट्र में,
विज्ञान-कला-सभ्यता-इतिहास-परंपरा में।।3।। जीया...

ये सब तेरा न स्वरूप ये सब विकार भाव है,
सत्य-समता-शांति तेरा तो परम-स्वभाव है,
अनंत ज्ञान-दर्शन-सुख-वीर्य-अव्याबाध है,
सच्चिदानंद तेरा स्वरूप पावन शुद्ध-बुद्ध है।।4।। जीया...

विभाव भाव से (तुझे) मिले अनंत दुःख-संताप है,
तन-मन-आत्मा से सहे आधि-व्याधि के ताप है,
संक्लेश से मिले दुःख विविध प्रकार है,
कर्म सिद्धांत मनोविज्ञान आयुर्वेद/(अनुभव) से सिद्ध है।।5।। जीया...

कलह-विसंवाद-अशांति-वाद-विवाद-वैरत्व,
तनाव फोबिया डिप्रेशन शिजोफ्रेनिया हृदयाघात,
इसीसे भिन्न स्व-स्वभाव में न होते हैं पर-विभाव/(दुःख-संताप),
'कनक' विभाग त्याग करो सेवो है! आत्म-स्वभाव।।6।। जीया...

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 18.01.2015, मध्याह्न 1.38

मेरा एकान्तवास मौन व कथन के कारण

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : तेरे प्यार का आसरा.....)

एकान्तवास में मैं रहना चाहता हूँ, ध्यान-अध्ययन व समता चाहता हूँ।
मनन-चिन्तन सह मौन चाहता हूँ, ख्याति-पूजा-लाभ से मैं दूर रहता हूँ।।

शोध-बोध-अनुभव-शांति चाहता हूँ, आत्मानुभव सह विश्वास चाहता हूँ।
समय-शक्ति का सदुपयोग चाहता हूँ, संकल्प-विकल्प व संक्लेश त्यागता हूँ।।

श्लोक- जनेभ्यो वाक् ततः स्पन्दो मनसश्चित्तविभ्रमाः।
भवन्ति तस्मात्संसर्ग जनैर्योगी ततस्त्यजेत्।। (72 समाधितंत्र)

हिन्दी- जन-सम्पर्क सह वार्तालापों से, स्पन्दित होता मन विभ्रम चित्त भी।
जन-सम्पर्क तथा वार्तालाप दोनों, त्याग करते मुमुक्षु श्रमण योगी।।

श्लोक- आत्मज्ञानात्परं कार्यं न बुद्धौ धारयेच्चिरम्।
कुर्यादर्थवशात् किंचिद्वाक्कायाभ्यामतत्परः।। (50 समाधितंत्र)

हिन्दी- आत्मज्ञानपरे अन्य सभी कार्य, नहीं धारणीय है अधिक काल।
आवश्यकतानुसार कुछ कार्य, करणीय वाक् काया से अतत्पर।।

श्लोक- अज्ञापितं न जानन्ति यथा मां ज्ञापितं तथा।
मूढात्मानस्ततस्तेषां वृथा मे ज्ञापनश्रमः।। (58 समाधितंत्र)

हिन्दी- समझाने या असमझाने पर भी, मूढ़ न समझते ऐसी अवस्था में ही।
समझाने का मेरा श्रम व्यर्थ जाता, अतएव मूढ़ को नहीं समझाता।।

श्लोक- व्यवहारे सुषुप्तो यः स जागर्त्यात्मगोचरे।
जागर्ति व्यवहारेऽस्मिन् सुषुप्तश्चात्मगोचरे।। (78 समाधितंत्र)

हिन्दी- व्यवहार में सुप्त होते ज्ञानी-ध्यानी, आध्यात्मिकता में होते पारगामी।
व्यवहार में जागृत होते भोगी-अज्ञानी, आध्यात्मिकता से होते प्रतिगामी।।

श्लोक- तद्ब्रूयात्तत्परान्पृच्छेत्तदिच्छेत्तत्परो भवेत्।
येनाविद्यामयं रूपं त्यक्त्वा विद्यामयं व्रजेत्।। (43 समाधितंत्र)

हिन्दी- आत्मा के लिए बोलो तथाहि पूछो, उसकी इच्छा करो तत्पर बनो।
अज्ञानता को त्यागो विद्यामय ही बनो, ऐसा ही ज्ञानी-ध्यानी श्रमण बनो।।

श्लोक- पैशून्य हास्यगर्भं कर्कशमसमंजसं प्रलापितं च।
अन्यदपि यदुत्सूत्रं तत्सर्वं गर्हितं गदितम्।। (96 पु.सि.)

हिन्दी- पैशून्य हास्य गर्भ कर्कश वचन, त्यजनीय है असमंजस व प्रलाप।
अन्य भी जो उत्सूत्र व गर्हित कथन, त्यजनीय (है) सभी ये असत्य वचन।

श्लोक- अरतिकरं भीतिकरं खेदकरं वैरशोक कलहकरम्।
यदपरमपि तापकरं परस्य तत्सर्वमप्रियं ज्ञेयम्।। (98 पु.सि.)

हिन्दी- अरतिकर व भीतिकर जो कथन, त्यजनीय सभी खेदकर भी वचन।
वैर शोक कलहकर जो वचन, त्यजनीय (सभी) तापकर अप्रिय वचन।।

श्लोक- मिथ्योपदेश दानं रहस्योऽभ्याख्यान कूटलेखकृती।
न्यासाऽपहार अतिचाराः भवन्तिमन्त्रभेदाश्च।। (184 पु.सि.)

हिन्दी- मिथ्या-उपदेश रहस्य उद्घाटन कथन, कूटलेखकरण न्यासापहार हरण।
गुप्त अभिप्राय का भी प्रगटीकरण, अतिचार पाँचों सत्य कथन में।।

श्लोक- धर्मनाशे क्रियाध्वंसे सुसिद्धान्तार्थ विप्लवे।
अपृष्टैरपि वक्तव्यं तत्स्वरूपप्रकाशने।। (ज्ञानार्णव)

हिन्दी- धर्म के नाश में या क्रिया के ध्वंस में, सुसिद्धांत अर्थ के विप्लव (समय) में।
बिना पूछे भी कथन करणीय, तत्तत्स्वरूप प्रकाशन के लक्ष्य में।।

श्लोक- अज्ञानतिमिरव्याप्तिमपाकृत्य यथायथम्।
जिनशासन माहात्म्य प्रकाशः स्यात्प्रभावना।। (18 र.श्रा.)

हिन्दी- अज्ञान-तिमिर से व्याप्त संसार में, उसे दूर करने के प्रयोजन में।
जिनशासन माहात्म्य प्रकाशनार्थे, प्रभावना हो पवित्र भाव से।।

गाथा- रुसउ वा परो मा वा विसं वा परियतउ।
भासियव्वा हिय भासा सपक्खगुण करिया।। (श्वे. साहित्य)

हिन्दी- कोई हो रोष या कोई हो तोष, कोई विष माने कोई अमृत।
स्व-पर हितकर वचन ही योग्य, अहितकर वचन सभी ही त्याज्य।

शिक्षा- समता-शांति-मौन मेरे तो श्रेय, हितकर सत्य कथन प्रिय।
असत्य विसंवाद कलह अप्रिय, अनुशासनहीन अव्यवस्था अप्रिय।।

अधिकांश जन होते (है) संकीर्ण स्वार्थी, रूढ़िवादी पंथ-मत के दम्भी।
ईर्ष्या-द्वेष-घृणा से होते आवेशित, सत्य-समता से होते वे वंचित।।

आत्महित हेतु वे होते न तत्पर, सत्ता-संपत्ति व प्रसिद्धि के आतुर।
अव्यवस्थित ज्ञान तथाहि व्यवहार, न करते कर्त्तव्य विनय सदाचार।।

दम्भ प्रदर्शन हेतु होते वे आतुर, छिद्रान्वेषण निन्दा में होते हैं भरपूर।
फैशन-व्यसन व भोगोपभोग में, अस्त-व्यस्त व संत्रस्त जीवन में।।

इनसे विपरीत मेरे भाव-व्यवहार, अतः मैं चाहूँ मौन-एकांतवास।
राग-द्वेष-मोह मैं किसी से न करूँ, 'कनक' स्व-स्वभाव हेतु करूँ प्रयास।।

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 15.01.2015, रात्रि 9.24

स्व-दोष परिज्ञान के उपाय व फल

(उत्तरोत्तर ज्ञान से योगियों के अनुभव व कर्त्तव्य)

(ज्ञानी की दृष्टि से मोही पागल व मोही की दृष्टि से ज्ञानी पागल)

(राग : छोटी-छोटी गैया.....)

श्लोक- यद्यदाचरितं पूर्वं तत्तदज्ञानचेष्टितम्।
उत्तरोत्तरविज्ञाद्योगिनः प्रतिभासते।। (151 आत्मानुशासन)

हिन्दी- जो-जो आचरण हुआ है पूर्व, वह-वह सब अज्ञान चेष्टित।
उत्तर-उत्तर विज्ञान के द्वारा, योगियों को होता प्रतिभासित।।

श्लोक- भुक्तोज्झिता मुहुर्मोहान्मया सर्वेऽपि पुद्गलाः।
उच्छिष्टेष्विव तेष्वद्य मम विज्ञस्य का स्पृहा।। (30 इष्टोपदेश)

हिन्दी- ज्ञानी विरक्त होता भोगों से, मानकर यह सब मेरा उच्छिष्ट।
सभी भौतिक को भोगा मैं अनेक बार, अतएव न भोगूँ मेरा उच्छिष्ट।।

श्लोक- व्यवहारे सुषुप्तो यः स जागर्त्यात्मगोचरे।
जागर्ति व्यवहारेऽस्मिन् सुषुप्तश्चात्मगोचर।। (7 समाधितंत्र)

हिन्दी- जो सांसारिक कार्य में सुप्त/(सुस्त), वह आध्यात्मिक कार्य में चुस्त/(मस्त)।
जो सांसारिक कार्य में चुस्त, वह आध्यात्मिक कार्य में सुप्त।।

रहस्य- यथाहि अबोध बालक खेलता है, धूली मिट्टी व मल आदि से।
तथाहि मोही अज्ञानी जीव आसक्त, होता है कामभोग में।। (1)

प्रबुद्ध होने पर यथा बालक, विरक्त होता है धूलीमलमिट्टी से।
आध्यात्मिक ज्ञानी/(योगी) तथाहि होता, विरक्त समस्त कामभोग से।। (2)

यथा-यथा प्रकाश अधिक होता, तथा-तथा अंधेरा का होता नाश।
तथाहि आध्यात्मिक ज्ञान-ज्योति से, अज्ञानमोहतम का होता विनाश।। (3)

अज्ञानी मोही जीव नहीं जानता, स्व-पर-उपकार के भाव व काम।
ईर्ष्या-घृणा-तृष्णा-द्वेष-काम सह, काम करता है अयोग्यतम।। (4)

सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि-डिग्री हेतु, करते अन्याय व अत्याचार।
फैशन-व्यसन-शोषण करते, करते हिंसा-झूठ व व्यभिचार।। (5)

मिलावट-भ्रष्टाचार ठगबाजी करते, करते ढोंग-पाखण्ड व दंभ/(मद)।
आक्रमण-युद्ध-हत्या करते, करते बहुविध आतंकवाद।। (6)

इन सब में मोही सजग रहता, मानता यह सब मेरा काम।
हित-अहित-परमार्थ न जानता, न करता स्व-पर-उपकार के काम।। (7)

आध्यात्मिक ज्ञानी जानते यह सब, पागलों के समान काम।
स्व-पर-अहितकारी आत्मपतनकारी, इहपरलोक हेतु दुःखद काम।। (8)

अतएव वे इनसे निवृत्त होकर, आत्मकल्याण में होते प्रवृत्त।
ज्ञान-ध्यान-तप-त्याग में लीन होते, आध्यात्मिक सुख में होते प्रवृत्त।। (9)

अज्ञानी मोही को सब गलत लगता, जो करते है आध्यात्मिक संत।
आध्यात्मिक योगी के भाव-व्यवहार, को वह मानता है उन्मत्तवत्/(पागलवत्)।।(10)

इसलिए मोही आध्यात्मिक संत का, अनादर व हत्या तक करता।
संत तो स्वर्ग-मोक्ष पधारते, अज्ञानी भोगता अनंत दुःख।। (11)

अतएव हे जीव! बनो आध्यात्मिक, पाओ हे! आत्मिक अनंत सुख।
'कनकनन्दी' को अतः भाया आध्यात्मिक, प्राप्त करने हेतु आत्मिक सुख।। (12)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 08.01.2015, रात्रि 8.07

कठोर भी गुरुवचन से भव्य जीव विकसित होता

(राग : छोटी-छोटी गैया.....)

श्लोक- विकासयन्ति भव्यस्य मनोमुकुलमंशवः।
रवेरिवारविन्दस्य कठोराश्च गुरुक्तयः।। (42 आत्मानुशासन)

हिन्दी- कठोर सूर्य किरणों से, यथा विकसित होता कमल।
कठोर भी गुरु कथन से, तथा विकसित भव्य कमल।।

श्लोक- लोकद्वयहितं वक्तुं श्रोतुं च सुलभाः पुराः।
दुर्लभाः कर्तुमद्यते वक्तुं श्रोतुं च दुर्लभाः।। (43 आत्मानुशासन)

हिन्दी- उभयलोक हितकर, वक्ता-श्रोता सुलभ पूर्वे।
पालन दुर्लभ पूर्व भी, वक्ता-श्रोता दुर्लभ अब।।

श्लोक- हितं हित्वाऽहिते स्थित्वा दुर्धीर्दुःखायसे भृशम्।
विपर्यये तयोरेधि त्वं सुखायिण्यसे सुधीः।। (46 आत्मानुशासन)

हिन्दी- हित त्यागकर अहित अपनाकर, दुर्बुद्धि से पाया दुःख अनेक।
विपरीत करो इसी से, सुख पाओगे बनो हे! सुबुद्धि।।

रहस्य- अनादि काल से मोह अज्ञान से, आवेशित हैं संसारी जीव।

इसी के कारण विपरीत भाव व, व्यवहार करते हैं संसारी जीव।। (1)

क्रोध-मान-माया-लोभ से ग्रसित, अन्याय अत्याचार करते दुराचार।
हिंसा-झूठ-चोरी-कुशील-परिग्रह सह, सप्त व्यसन सेवते अष्ट मद।। (2)

इनसे दूर करने हेतु, भव्य को देते हैं गुरु उपदेश।
सम्यग्दृष्टि से मुनि शिष्य को, शिक्षा-दीक्षा देते हैं गुरु विशेष।। (3)

अनुशासन या दोष दूर हेतु, गुरु जब बोलते हैं कठोर वचन।
भव्य जीवों का मन होता विकसित, सूर्य किरण से यथा पंकज।। (4)

यथा दयालु (सु) योग्य वैद्य द्वारा, चिकित्सा होती है विविध प्रकार।
लंघन विरेचन वस्तिकर्म स्वेदन, शल्यक्रिया आदि अनेक प्रकार।। (5)

तथापि रोगी जो निरोग इच्छुक, इससे न माने वैद्य को दुष्ट।
तथाहि भव्य जीव कटु वचन से, न माने गुरु को दुष्ट।। (6)

अपितु जो गुरु को माने भव्य जीव, परम-उपकारी उभय लोक हेतु।
भक्ति-श्रद्धा बहुमान सेवा से, कृतज्ञ बने आत्मकल्याण हेतु।। (7)

गुरु उपदेश बिना सम्यक्त्व ही, न होता भव्य जीवों को।
अतः गुरु को माने भव्य जीव महान्, ऐसा ही मान्य है 'कनक' को।। (8)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 31.12.2014, प्रातः 7.35

मोही की सर्व-अवस्था विभ्रम-स्वरूप

(आत्मज्ञ को मोही की सर्व अवस्था विभ्रम रूप ज्ञात होती)

(चाल : आत्मशक्ति से.....)

श्लोक- सुप्तोन्मत्रायवस्थैव विभ्रमोऽनात्म दर्शिनाम्।
विभ्रमोऽक्षीण दोषस्य सर्वावस्थाऽऽत्मदर्शिनः।। (93 समाधितंत्र)

हिन्दी- सुप्तउन्मत्त अवस्था को ही, मोही जानता विभ्रम है।
आत्मदर्शी को मोही की हर, अवस्था लगती विभ्रम है।। (1)

समीक्षा- मोही न जानता आत्म-अनात्मा को, हेय-उपादेय तत्त्व को।
इसलिए उसकी हर अवस्था ही, होती है अज्ञानमय ही।। (2)

निद्रा उन्मत्त अवस्था को ही, वह जानता विभ्रममय है।
आरम्भ परिग्रह भोग विलासिता को, न माने विभ्रममय है।। (3)

मोही की हर क्रिया लगे आत्मज्ञ को, सुप्त व विभ्रममय है।

सोना, जागना, खाना, पीना आदि, होती जो मोह-अज्ञानमय है।। (4)

मद्य-मोहित की हर क्रिया यथा, ज्ञानी को लगे गलत है।
यथा मोही की हर क्रिया, आत्मज्ञ को लगे गलत है।। (5)

तन-मन-धन-ख्याति-पूजा-लाभ, सत्ता-संपत्ति-प्रसिद्धि।
भोग-उपभोग व शत्रु-मित्र में, जागृत रहता है अज्ञानी।। (6)

इसी से परे आध्यात्मिक ज्ञानी, ज्ञान-ध्यान में होते जागृत।
समता-शांति व आत्म-स्वभाव में, होते वे रत व मस्त।। (7)

अलौकिक वृत्ति होती है योगी की, उनसे विपरीत मोही की।
एक मोक्ष-पथ तो अन्य बंध-पथ, 'कनक' चाहे आत्म प्रवृत्ति।। (8)

हठग्राही (पूर्वाग्रही, मिथ्यादृष्टि) सत्य को नहीं मानता

(चाल : आत्मशक्ति....., शत-शत वंदन....., भला किसी का कर न सको.....)

श्लोक- यत्रेवाहितधीः पुंसः श्रद्धा तत्रैव जायते।
यत्रैव जायते श्रद्धा चित्तं तत्रैव लीयते।। (95) समाधितंत्र

हिन्दी- जिसमें लगती मानव (की) बुद्धि, श्रद्धा उसमें ही लग जाती।
जिसमें लगती है श्रद्धा, उसमें चित्त की लीनता होती।।

श्लोक- यत्रानाहितधीः पुंसः श्रद्धा तस्मान्निवर्तते।
यस्मान्निवर्तते श्रद्धा कुतश्चितस्य तल्लय।। (96) समाधितंत्र

हिन्दी- जिससे निवृत्त हो जाती बुद्धि, श्रद्धा उसमें निवृत्त होती।
जिससे निवृत्त हो जाती श्रद्धा, चित्त की उसमें न होती प्रवृत्ति।।

श्लोक- आग्रहीवत् निनीषति युक्तिं यत्र-तत्र मतिरस्य निविष्ठा।
पक्षपात रहितस्य तु युक्ति यत्र-तत्र मतिरस्य निवेशम्।।

हिन्दी- आग्रही युक्ति को भी खींच लेता है, स्वमति जहाँ भी होती है।
पक्षपात से जो रहित होता है, स्वमति को युक्ति में ले जाता है।।

श्लोक- नाज्ञो विज्ञत्वमायाति विज्ञो नाज्ञत्वमृच्छति।
निमित्तमात्रमन्यस्तु गतेधर्मास्तिकायवत्।। (35) इष्टोपदेश

हिन्दी- अज्ञानी (अभव्य) जीवन होता है ज्ञानी, ज्ञानी जीव भी न होता है अज्ञानी।
निमित्त मात्र है उपदेश तथा, गति के लिए धर्मास्तिकाय यथा।।

गाथा- मिच्छित्तं वेदंतो जीवो विवरीय दंसणो होदी।

ण य धम्मं रोचेदि हु महुरं खु रसं जहा जरिदो।। (17) गो.जीव.

मिथ्यादृष्टि जो जीव होता, विपरीत श्रद्धान से (वह) युक्त होता।
उसे सद्धर्म नहीं रुचता, ज्वर रोगी को यथा मधुर न रुचता।।

गाथा- मिच्छाइट्ठी जीवो उवइट्ठं पवयणं ण सद्दहदि।
सद्दहदि असब्भावं उवइट्ठं वा अणुवइट्ठं।। (18) गो.जीव.

हिन्दी- मिथ्यादृष्टि जो जीव होता, उपदेश प्रवचन नहीं रुचता।
असद्भाव को भी श्रद्धान करता, उपदेश होता या नहीं भी होता।।

समीक्षा- अनादि मोहासक्त जीव तो विपरीत ज्ञान से युक्त होता।
विपरीत रुचि व बुद्धि से सहित, विपरीत काम में प्रवृत्त होता।।

सत्य-तथ्य व आत्मतत्त्व में, रुचि न होती तथाहि बुद्धि।
राग-द्वेष-मोह-काम-क्रोध में, होती है बुद्धि होती प्रवृत्ति।।

आहार-निद्रा-भय-मैथुन व, परिग्रह संचय में होती है बुद्धि।
ईर्ष्या, घृणा, तृष्णा, संकीर्णता में, सहज रूप में होती प्रवृत्ति।।

हर युक्ति व धर्म कर्म में, इसी हेतु ही करे प्रवृत्ति।
इसी हेतु ही पक्षपात करे, नहीं होगा वह सत्य में प्रवृत्त।।

ऐसे मिथ्यादृष्टि/(अभव्य) जीव को कोई, न कर सकेगा सत्पथगामी।
परिणमन न करने वाले को, कोई न बना सकेगा ज्ञानी।।

गति करने वालों को धर्मास्तिकाय सहायक होता।
गति रहित वालों को धर्मास्तिकाय न सहायक होता।।

मिथ्यादृष्टि जीव को तो उपदेश सत्य भी नहीं सुहाता।
आगम ज्ञाता या आगम से भी, स्वदुराग्रह को नहीं छोड़ता।।

इसलिए तो अनादि काल से, जीव संसार में परिभ्रमण करे।
उत्तम द्रव्य क्षेत्र कालादि पाकर, सम्यक्त्व नहीं पाते।।

अनंत बार चार उपलब्धि को, पाया करणलब्धि नहीं पाया।
परिणाम विशुद्धि के बिना, सम्यक्त्व भाव को नहीं पाया।।

इसलिए ज्ञान न सही होता, तथाहि आचरण भी न सही होता।
अतएव हर धार्मिक कार्य बाह्य, ढोंग पाखण्ड ही होता।।

विनम्र सत्यग्राही बनने से, परिणाम जब होगा सम्यक्त्व।
ज्ञान आचरण सही होने से, रत्नत्रय भी होगा सम्यक्त्व।।

जिससे आत्मा की होगी विशुद्धि, जिससे होगी मोक्ष की सिद्धि।
यह ही जीव की परम उपलब्धि, 'कनकनन्दी' की आत्मा की निधि।।

वैज्ञानिक ब्रह्माण्डीय ज्ञान से प्राप्त शिक्षाएँ

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : आत्मशक्ति से....., शत-शत वंदन.....)

ब्रह्माण्ड के शोध-बोध से, विज्ञानियों को होता ज्ञान है।
हम तो अल्पज्ञ नहीं जानते, ब्रह्माण्डीय ज्ञान-विज्ञान है।।

किस विधि से बना यह ब्रह्माण्ड, क्या कारण है इस ब्रह्माण्ड का।
किस कारण हुआ महाविस्फोट, कैसे कार्य करता है यह ब्रह्माण्ड।।

कितने बार हुआ महाविस्फोट, किस में हुआ यह महाविस्फोट।
कितने पदार्थ है इस ब्रह्माण्ड में, क्या है डार्क एनर्जी व डार्क मेटर में।।

कितना विस्तार है इस ब्रह्माण्ड का, कितनी गेलेस्की (है) इस ब्रह्माण्ड में।
कितने ग्रहों में है जीव-जगत्, क्या सभ्यता-संस्कृति है उन जीवों के।।

इसकी खोज हेतु (जब करते) अंतरिक्ष यात्रा, दूर से देखते जब इस पृथ्वी को।
फोटो लेते जब वे इस धरती का, 'ब्लूडॉट' सम देखते इस धरती को।।

विशाल ब्रह्माण्ड में यह पृथ्वी, 'ब्लू धूली कण' सम होती प्रतीति।
यह वही धरती हमारे घर, जहाँ निवास करते नारी व नर।।

यहाँ जन्म लेते महामानव गण, जिनसे जन्म लेते ज्ञान-विज्ञान।
सभ्यता संस्कृति शिक्षा जन्म भी लेते, दया सेवा परोपकार जन्म भी लेते।।

दुष्ट-दुर्जन पापी भी यहाँ जन्मते, अन्याय अत्याचार युद्ध करते।
शोषण मिलावट व हत्या करते, प्रकृति हनन व प्रदूषण करते।।

आधिपत्य हेतु करते पृथ्वी का संहार, स्वयं का ही अधिकार मानते पामर।
'ब्लू डॉट' को भी करते खण्ड-विखण्ड, अन्य जीवों का छिनते अधिकार।।

हरी-भरी धरती को भी करते बंजर, शोषण-प्रदूषणों से करते संहार।
'वसुधैव कुटुम्ब' को करते विनाश, स्वयं के निवास को ही करते विनाश।।

मानव की क्षुद्रता का होता है ज्ञान, संकीर्णता परे होने का भान।
सत्य जिज्ञासु विनम्रता का पाठ मिलता, दयालु परोपकारी का पाठ मिलता।।

क्षुद्र अहंकार का भी गलन होता, मानव की क्षमता का भान भी होता।

'परस्परोपग्रहो' का पाठ मिलता, 'कनक' विविध ज्ञान इससे पाता।।

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 02.12.2014, रात्रि 1.27 से 2.23
(यह कविता वैज्ञानिक T.V. प्रोग्राम Cosmos से प्रेरित व प्रभावित)

मेरी आध्यात्मिक-भावना (स्वरूप)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : तुम दिल की धड़कन.....)

एगो मे सास्सद अप्पा, णाण दंसण समग्ग हूँ।
स्वयंभू स्वयंपूर्ण स्वावलंबी, सच्चिदानंद स्वरूपी हूँ।।

एक होने से मेरा कोई अन्य, न होता मेरा स्वरूप।
द्रव्य-भाव-नोकर्म रहित, शत्रु-मित्र आदि मेरा न रूप।।

इसलिए मैं स्वयं के लिए, स्वयं में ही लवलीन रहूँ।
अन्य के कारण राग-द्वेष-मोह, संकल्प-विकल्प नहीं करूँ।। (1)

शाश्वत होने से अविनाशी हूँ, जन्म-जरा-मरण से परे।
इसलिए मैं सप्त-भय रहित हूँ, हानि-लाभ से परे।।

ज्ञानदर्शन स्वरूपी होने से, अज्ञान मेरा विभाव है।
अतः विभाव को मैं दूर करूँ, प्राप्त करूँ स्व-स्वभाव है।। (2)

स्वयंभू होने से अन्य से मेरा, जन्म होना संभव नहीं।
जन्म रहित होने के कारण, मरण भी मेरा संभव नहीं।।

स्वयंपूर्ण होने से (मैं) अन्य से, मुझे कुछ भी नहीं चाहिए।
अतः ही मैं ईर्ष्या रहित हूँ, परिग्रह तृष्णा नहीं चाहिए।। (3)

इन (सब) कारणों से मैं स्वावलंबी हूँ, अतएव हूँ मैं स्वतंत्र।
पर-निरपेक्ष आत्मवावलंबी हूँ, अपेक्षा-प्रतीक्षा से स्वतंत्र।।

सच्चिदानन्द हूँ सत्य-शिव-सुंदर, अव्यय-अविनाशी-परब्रह्म हूँ।
मेरा स्वरूप ही मुझे चाहिए, पर से मैं पूर्ण विरक्त हूँ।। (4)

स्व-पर चतुष्टय सिद्धांत

(चाल : अच्छा सिला दिया....., शत-शत वंदन....., सायोनारा.....)

द्रव्य क्षेत्र काल भाव को जानो, स्व-पर रूप में इसे पहचानो।
स्व-द्रव्य क्षेत्र काल भाव निज के, पर-द्रव्य क्षेत्र काल भाव परे के।।

चैतन्यमय है स्व द्रव्य को जानो, स्व-आत्मप्रदेश स्वक्षेत्र मानो।
स्व-परिणमन स्वकाल जानो, स्व-सत्ता ही स्वभाव मानो।।

अन्य सभी द्रव्य होते पर द्रव्य, आकाश है व्यवहार के क्षेत्र।
परिणमन के हेतु है काल, निश्चय-व्यवहारमय है काल।।

अभिन्न षट् कारक स्वयं को जानो, कर्त्ता से लेकर संबंध जानो।
इसे ही उपादान निश्चय जानो, शुद्धोपयोग या शुद्धात्मा मानो।।

इसी हेतु होती धर्म (की) आराधना, पूजा से लेकर ध्यान की साधना।
संवर निर्जरा भी होती है स्वयं में, मोक्षमार्ग तथा मोक्ष भी स्वयं में।।

पर चतुष्टय भी बनते निमित्त, निमित्त-उपादान से बनते कार्य।
बंधन से लेकर मोक्ष पर्यन्त, कार्य-कारण होते निमित्त उपादान।।

तथाहि मूर्तिक अमूर्तिक द्रव्यों में, शुद्ध व अशुद्ध समस्त द्रव्यों में।
यह ही सिद्धांत होते हैं प्रयोग, सार्वभौम यह है वैश्विकमय।।

यह है सर्वज्ञ देव ज्ञात सिद्धांत, संपूर्ण सिद्धांत इसी में गर्भित।
अणु से लेकर ब्रह्माण्ड में (भी) व्याप्त, 'कनक' का लक्ष्य आत्म स्वभाव।।

आत्मोपलब्धि ही सर्वोपरि

(चाल : सायोनारा....., शत-शत वंदन.....)

ईर्ष्या तृष्णा घृणा से, जो धर्म को पाले हैं,
वास्तविकता से वे सभी अधर्मी घनेरे।
सत्य समता शांति को, जो धारण करे है,
वास्तविकता से वे सभी, धर्म को पाले हैं।। (1)

राग-द्वेष-मोहादि ही, यथार्थ अधर्म है,
इसके त्याग से होता, यथार्थ सुधर्म है।।
शुद्धात्म स्वरूप ही, यथार्थ स्व-धर्म है,
अशुद्ध-आत्मस्वरूप ही, यथार्थ कुधर्म है।। (2)

जो आत्म-स्वरूप को पाते, वे सब कुछ पा जाते,
आत्म-स्वभाव को जो त्यागते, वे सब कुछ खोते।।
आत्म-स्वभाव में है, स्व-अनंत वैभव,
आत्म-स्वभाव से हीन, होते सबसे गरीब।। (3)

सत्ता-संपत्ति एवं, प्रसिद्धि सहित भी,
सत्ता संपत्ति शांति से, रहित जो भी।।
वे तो आत्मा रहित शरीर समान,
उसकी उपलब्धि सभी शून्य समान।। (4)
आत्महीनता ही है, सबसे बड़ी हीनता,
आत्म मलीनता ही है, सबसे बड़ी आत्महत्या।।
आध्यात्मिक उच्चता ही है, सब से महान् गुण,
आध्यात्मिक पतन ही है, जघन्य पतन।। (5)
आध्यात्मिक उपलब्धि सहित जो होते,
चक्रवर्ती इन्द्र से भी, महान् वे होते।।
सच्चिदानंद स्वरूप है, आध्यात्मिक-उपलब्धि,
इसी हेतु 'कनक' त्याग करे, बाह्य सर्व उपलब्धि।। (6)

(यह सोचने की बजाये कि, आप क्या खो रहे हैं, यह सोचने का प्रयास करे कि, आपके पास ऐसा क्या है, जो बाकी सभी लोग खो रहे है। **-डार्विन पी.किन्सले** की इस-उक्ति से भी यह कविता प्रेरित है।)

मेरी आत्म-आलोचना

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : तुम दिल की धड़कन....., माईन-माईन.....)

(संकीर्ण-कट्टर-क्रूर धर्मांधों के भाव व्यवहार से पीड़ित होकर यह आत्म संबोधनात्मक कविता बनी)

सर्वज्ञ कथित आचार्यकृत आगम में, मैंने पढ़ा है अनेक बार।
अनंत काल से अनंत भवों में, स्वयं को न सुधारा मैं एक बार।।
इसलिये मैं अभी तक भी, कर्म बंधनों से न हो पाया हूँ मुक्त।
किया पंचपरिवर्तन के सभी कार्य, आत्मोपलब्धि से न हुआ हूँ युक्त।।
बाह्य धर्म क्रिया तप त्याग किया, ढोंग-पाखण्ड भी किया अनेक।
सत्ता-संपत्ति व प्रसिद्धि हेतु, धार्मिक क्रिया-काण्ड किया अनेक।।
सुधर्मी-विधर्मी अन्य पंथमतियों से, ईर्ष्या-द्वेष-घृणा किया अनेक।
स्वयं को ही श्रेष्ठ जताने हेतु, वाद-विवाद युद्ध किया अनेक।।

आत्म आलोचना नहीं किया मैंने, सत्य समता को नहीं किया प्राप्त।
आत्मविशुद्धि साधना के बिना, आत्म तत्त्व को नहीं किया प्राप्त।।

ख्याति-पूजा-लाभ-लोकरंजन हेतु, किया प्रवचन व धर्म प्रचार।
अनुयायी भक्तों की भीड़ जोड़कर, अनैतिक कार्य भी किया प्रचुर।।

अन्य को सही बनाने हेतु कठोर, क्रूरता का काम भी किया।
मेरे अनुसार जो न चले उनसे, वैरत्व किया व बंध भी किया।।

यह सब आत्म पतन के कारण, त्याग रहा हूँ मैं नवकोटि से।
आत्मविशुद्धि व समता-शांति से, भिन्न (हर) भाव त्यागूँ मैं नवकोटि से।।

इसीसे युक्त धर्म प्रभावना व, विश्वशांति हेतु मैं भाऊँ भावना।
संकल्प-विकल्प व संक्लेश त्यागकर, 'कनक' सदा करे शुचि/(आत्म) भावना।।

आत्म सम्बोधन

(अंधकारपूर्ण दुनिया में ज्योतिर्मय बनने हेतु)

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : दुनिया में रहना है तो.....)

दुनिया के अंधेरे में ज्योति बनो प्यारे। सत्य बनो, साम्य बनो शांति वरो प्यारे।।
आत्महित सह ही परहित करो। स्व-पर-विश्व को ज्योतिर्मय करो।। (1)

स्व को बुझाने से न अंधेरा हटेगा। स्व-उपकार बिना न पर-उपकार होगा।।
अतएव धैर्य धरो अविचल बनो। स्व-पर तारक जहाज सम बनो।। (2)

अंधेरा से न हारो न मंद ज्योति बनो। छिद्र जहाज के सम न दोषकारी बनो।।
बुझा हुआ दीपक न देता (है) प्रकाश। पूज्य गुण बिन कोई न बने आदर्श।। (3)

ईर्ष्या-तृष्णा-घृणा रूपी हवा से न बुझो। इसे बहाने वाले पंखा से न बुझो/(झुको)।।
निन्दा अपमान व प्रलोभन द्वारा। नहीं डोलो कभी राग-द्वेष-मोह द्वारा।। (4)

पक्षपात-भेदभाव से अविचल रहो। संकीर्ण-कट्टरता से दूर सदा चलो।।
इन भाव-व्यवहारों से जो होता है युक्त। नवकोटि से उनसे न हो (तू) संयुक्त।। (5)

पावन लक्ष्य की ओर अनुभव से चलो। द्रव्य-क्षेत्र-काल-सह सुभाव को तोलो।।
पर-अप्रभावी बन सत्यमार्ग पे चल। 'कनक' स्व संबोधन हेतु आत्मा के बोल।। (6)

अपूर्व व अलौकिक कार्य करना है मुझे

(ईसाई नववर्ष (2015) की पूर्व संध्या में बनी मेरी कार्य योजनाएँ)

-आचार्य कनकनन्दी

(राग : शत-शत वंदन....., सायोनारा.....)

अनादि काल से अनंत भवों में, जो कार्य किया है मैंने।
इससे परे मुझे काम करना है, (जो) अपूर्व (व) अप्रचलित लोक में।। (1)

अभी तक मैंने अनंत बार, जन्म-मरण व भोग भोगा।।
राग-द्वेष-मोह-काम सहित, संकल्प-विकल्प अनेक किया।। (2)

सत्ता-संपत्ति व प्रसिद्धि हेतु, विभिन्न पाप भी अनेक किया।
शत्रु-मित्र-भाई-बंधु के लिए, अनेक अनर्थ मैंने किया।। (3)

आहार भय मैथुन परिग्रह हेतु, विभिन्न पाप भी अनेक किया।
तन-मन-इन्द्रियों के वशवर्ती होकर, अहित काम भी (अनेक) किया।। (4)

कट्टर संकीर्ण रूढ़ि परंपरा व, अंधश्रद्धा से धर्म भी किया।
दिखावा आडम्बर व प्रसिद्धि हेतु या, कामना द्रोह से धर्म भी किया।। (5)

अभी अनेक लोग देश-विदेशों के, जो कार्य कर रहे (है) अज्ञानवश।
राग-द्वेष या मोह से प्रेरित होकर, अथवा संकीर्ण स्वार्थवश।। (6)

वे सभी काम मैं न करूँगा, यद्यपि वे हो धर्म या शिक्षा क्षेत्र के।
धन-जन-मान या प्रसिद्धि के काम, सामाजिक राष्ट्रीय हो या विश्व के।। (7)

सत्य समता व शांति के कार्य, करूँगा महान् लक्ष्य व भाव से।
उदार पवित्र व निःस्वार्थ भाव से, स्व-पर-विश्व कल्याण हेतु से।। (8)

दबाव प्रलोभन व द्वंद्व संक्लेश रिक्त, करूँगा हर काम आत्महित में।
आत्मविशुद्धि ही परम लक्ष्य मेरा, अंतरंग-बहिरंग हर कार्य में।। (9)

सच्चिदानन्दमय मेरा ध्रुव स्वभाव, उसकी उपलब्धि है मेरा परम लक्ष्य।
उसके हेतु ही मेरा हर कार्य, 'कनक' का नहीं अन्य परम लक्ष्य।। (10)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 31.12.2014, रात्रि 8.11

मेरा परिचय

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : छोटी-छोटी गैया.....)

सत्ता-संपत्ति व प्रसिद्धि डिग्री, यह नहीं है मेरा स्व-परिचय।

नाम-ग्राम-जन्म-मरण तिथि, शत्रु-मित्र या कुटुम्ब-परिवार।। (1)

तन-मन-इन्द्रिय न मेरा परिचय, नहीं देश-भाषा राजनीति आदि।
यह सब तो अशुद्ध भौतिकमय, इसी से परे है मेरी स्थिति।। (2)

मैं हूँ सच्चिदानंदमय अमूर्तिक, स्वयंभू स्वयंपूर्ण शाश्वतिक।
अव्यय अविनाशी अविभागी, नित्य-नूतन व नित्य-पुरातन।। (3)

अतः सत्ता-सम्पत्ति आदि न मेरा रूप, यह तो भौतिकमय पर रूप।
नाम ग्राम आदि सब काल्पनिक, लोक-व्यवहारमय अशुद्ध रूप।। (4)

तन-मन-इन्द्रिय भी है कर्मजन्य, कर्म भी है सब भौतिकमय।
शत्रु-मित्रादि भी सभी कर्मजन्य, मेरा शुद्ध रूप है अकर्मजन्य।। (5)

आकाश में दृश्यमान विभिन्न रंग-रूप, आकाश के नहीं होते वे भौतिक रूप।
तथाहि व्यवहार के सभी परिचय, मेरा परिचय नहीं है सभी जड़मय।। (6)

मुनीनां अलौकिक वृत्तिः भवन्ति, लौकिक व्यवहार से परे प्रवृत्ति।
कर्मसह मुनिदशा सहितोऽपि, श्रद्धा-प्रज्ञा में स्वभाव की प्रवृत्ति।। (7)

उक्तंच- सर्व विवत्तोत्तीर्ण, यदा स चैतन्यमचलमाप्नोतिः।
भवति तदा कृतकृत्य, सम्यक् पुरुषार्थ-सिद्धिमापन्नः।। (11 पुरु.सि.)

हिन्दी- समस्त विभावों को पारकर जब, अचल चैतन्य को प्राप्त करे।
तब होता है जीव कृतकृत्यमय, सही पुरुषार्थ को प्राप्त कर।।

श्लोक- नित्यमपि निरूपलेपः स्वरूपसमवस्थितो निरूपघातः।
गगनमिव परम पुरुषः परम-पदे स्फुरति विशदतमः।। (223 पुरु.सि.)

हिन्दी- निरूपलेप होकर जब जीव, स्वरूप में स्थित होता है बिना घात।
आकाश के सम वह परम-पुरुष, परम पद में होता विशद प्रकाशित।।

श्लोक- कृतकृत्यः परमपदे परमात्मा सकल-विषय विरतात्मा।
परमानंद-निमग्नो, ज्ञानमयो नन्दति सदैव।। (224 पुरु.सि.)

हिन्दी- सकल विषय से विरक्त परमात्मा, कृतकृत्य (हो) स्थित होता परमपद में।
परमानंद में ही निमग्न होकर, ज्ञानानंद में ही रमन्ते सदैव।।

ऐसा ही श्रद्धान व ज्ञान से सम्पन्न, मैं हूँ अनंत-गुणों के धाम।
व्यवहार से हूँ मैं 'आचार्य कनक'/(कनकनन्दी), आचार्य कुंथुसागर गुरु है मम।।

मैं हूँ परम सत्तावान्

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : सत्यम्-शिवम्-सुन्दरम्.....)

सत् ही द्रव्य हैऽऽऽ द्रव्य ही सत् हैऽऽऽ द्रव्यमय विश्व हैऽऽऽ

जानोऽऽऽ सत्य पहचानोऽऽऽ आत्म द्रव्य भी सत्य हैऽऽऽ

मैं शुद्ध आत्मा हूँऽऽऽ परम शुद्ध सत्य हूँऽऽऽ परम सत्तावान् हूँऽऽऽ...।।ध्रुवपद।।

मैं हूँ अनन्तऽऽ गुणी...परम आत्म ज्ञानी...अनंत प्रमेय प्रमाण...

स्वभाव सिद्ध अनंत गुणी...2

नहीं है पर समवायी...मेरे ही अनुजीवी गुण...

अतः मैं सत्तावान्...अद्वितीय अनुपम...सच्चिदानन्दमय...(1)...

अतः मैं हूँऽऽ महानतम्...हर जीव मेरे सम...परम सत्ता सम है...

भेद तो बाह्य मात्र होता...2

कर्म उपज मात्र...यह सब है परतंत्र...

त्यागे कर्म बंधन...सर्व जीव समान...यह ही मोक्षधाम...(2)...

कर्म है विभावऽऽ मय...राग-द्वेष व मोह...धन-जन अक्ष व देह...

इससे परे है मेरा द्रव्य...2

अनंत गुणमय...अतः मैं सत्ता सम्पन्न...

यह है परम आध्यात्म...शुद्ध-बुद्ध आनंद...'कनक' का शुद्धभाव...(3)...

सन्दर्भ गाथा-

उत्तम गुणाण धामं सव्व दव्वाण उत्तमं दव्वं।
तच्चाण परम-तच्चं जीवं जाणेह णिच्छयदो।। (204) कार्तिकेयानुप्रेक्षा

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 30.01.2015, रात्रि 7.52

मेरा परम आध्यात्मिक सत्य स्वरूप

मैं स्वरूपतः सत्य एवं स्वभाव से सिद्ध

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : शत-शत वंदन....., सायोनारा....., आधा है चंद्रमा....., कसमें-वादे....., आत्मशक्ति से ओतप्रोत.....)

परम सत्य हूँ (मैं) ध्रुव तत्त्व हूँ, अनादि अनिधन (मैं) आत्म तत्त्व हूँ।

अहेतुक स्वयंभू (मैं) स्वयं पूर्ण हूँ, आदि मध्य अंत (से) रहित हूँ।।

परम सत्य (रूप) मैं स्वयं होने से, स्वयंभू-स्वयंपूर्ण-अहेतुक हूँ।
अतः (मैं) अनादि अनिधन हूँ, अतएव सनातन व ध्रुवरूप हूँ।।

आत्म तत्त्व हूँ अतः चेतन हूँ, अनंत ज्ञान दर्शन सुख रूप हूँ।
अतः तन-मन अक्ष न मम रूप, आधि व्याधि दुःखादि न मम रूप है।। (1)

अतएव मेरा न होता जन्म भी, बाल-वृद्ध-मृत्यु परे मैं भी।
मेरे स्वभाव से परे ये भाव हैं, कर्मजनित ये विकार भाव हैं।।

यदि ये मम स्वरूप होते, मेरे समान ये भी ध्रुव होते।
अनादि अनिधन शाश्वत होते, मोक्ष अवस्था में भी (मेरे) साथ होते।। (2)

अतएव मैं न बना पञ्च तत्त्व से, रज वीर्य या रसायनों से।
D.N.A., R.N.A. या X, Y (क्रोमोजोम) से, माइक्रोकॉण्ड्रिया या स्टेमसेल से।।

नहीं है कार्बन मेरा मूल तत्त्व, हाइड्रोजन या ऑक्सीजन (मेरा) तत्त्व।
नहीं मैं तारों के तत्त्व से बना, नहीं मैं अचानक दुर्घटना से बना।। (3)

नहीं आगमन (मेरा) उल्कापिण्ड से हुआ, नहीं पृथ्वी पर प्रथम बार हुआ।
एक कोशिय जीव से न प्रारंभ हुआ, मुझे बनाने वाला न कभी भी हुआ।।

मुझे सिद्धि हेतु न यंत्र चाहिए, मेरी सिद्धि हेतु न साक्षी चाहिए।
मैं स्वयं सिद्ध हूँ, स्वभाव सिद्ध हूँ, पर निरपेक्ष मैं आत्मसिद्ध हूँ।। (4)

मैं हूँ राजनीति व कानून परे, संविधान लौकिकता से परे।
रीति-रिवाज व संकीर्ण परे, पंथ-मत-जाति-भाषा-राष्ट्र परे।।

यथा आकाश स्वयं में सिद्ध है, बादल विद्युत् से न होता सिद्ध है।
बादल आदि भौतिक विकार रूप है, तन जन्म आदि भी कर्मज रूप है।। (5)

सर्वज्ञ ज्ञानगम्य मेरा स्वरूप, आगम वर्णित अतीन्द्रिय स्वरूप।
श्रद्धा प्रज्ञा (व) अनुभवगम्य रूप, 'कनक' का आत्मिक विश्व स्वरूप।। (6)

संदर्भित गाथाएँ-

दव्वं सहावसिद्धं सदिति जिणा तच्चदो समक्खादा।
सिद्धं तध आगमदोणेच्छदि जो सो हि परसमओ।। (98) प्रवचनसार

उत्तम गुणाण धामं सव्व दव्वाणं उत्तम दव्वं।
तच्चाण परम तच्चं जीवं जाणेह णिच्छयदो।। (204) कार्तिकेयानुप्रेक्षा

जीवो आणाइ-णिहणो परिणममाणो हु णव-णवं भाव।
सामग्गीसु पवट्टदि कज्जाणि समासदे पच्छा।। (231) कार्तिकेयानुप्रेक्षा

(यह कविता प्रवचनसार, कार्तिकेयानुप्रेक्षा, समयसार, अष्टावक्रगीता, उपनिषद्, गीता आदि से भी प्रभावित है।)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 29.01.2015, रात्रि 8.37

स्व-शुद्धात्म के विश्वास ज्ञानाचरण ही मोक्षमार्ग

(चाल : शत-शत वंदन....., भातकुली च्या खेळा मधली.....)

आत्मविश्वास ज्ञान चारित्र ही, समस्त विकास के मूल है।
अष्ट-मद, अष्ट-मल विवर्जित, सम्यग्दर्शन इसका मूल है।।ध्रु.।।

तत्त्वार्थ श्रद्धान या आत्मश्रद्धान से, होता है सम्यग्दर्शन।
आप्त-आगम व पदार्थ श्रद्धान, होता है सम्यग्दर्शन।।
स्वयं को जानना/(मानना) है द्रव्य रूप, जो है चेतनामय।
शुद्ध रूप से सिद्ध समान है, अनंतज्ञान दर्शन सुखमय।। (1)

द्रव्य-भाव व नोकर्म विवर्जित, शुद्ध-बुद्ध व आनंद है।
तन-मन इन्द्रिय आदि दशप्राण, रहित अमूर्तिक ज्ञानानंद है।।
ऐसा श्रद्धान ही सम्यग्दर्शन, जो मोक्ष का मूल कारण (है)।
इसी से ही ज्ञान सुज्ञान होता, आचरण होता सदाचरण (है)।। (2)

स्वयं को मानना/(जानना) नर-नारी रूप, अथवा बाल-वृद्ध है।
धनी-गरीब या काला-गोरा, यह सब मिथ्या श्रद्धान है।।
जाति-लिंग-पंथ-मतमय (मानना), तथाहि करना दुराग्रह है।
ये सब मिथ्या अज्ञानमय (है), जिससे होते राग-द्वेष है।। (3)

जिससे तृष्णा घृणा उपजे, उपजे ईर्ष्या वैर-विरोध है।
वाद-विवाद व कलह उपजे, उपजे विध्वंस युद्ध है।।
पंच पाप, सप्त व्यसन, चार कषाय तथा अष्टमद है।
अष्ट मल, सप्त भय होते है, बंधते अष्टविध कर्म है।। (4)

इससे ही पंच परिवर्तन होते, मिलते दुःख अनंत है।
इनके त्याग से मिलेंगे, ज्ञान-दर्शन सुख अनंत (है)।।
इसी हेतु ही आत्मविश्वास ज्ञान, चारित्र ही उपादेय है।
यह ही मोक्षमार्ग है जो, 'कनक' का आत्म-स्वभाव है।। (5)

धार्मिक के तीन-लक्षण

(सत्य-समता-शांति धार्मिक के तीन लक्षण)

(चाल : सावन का महीना....., झिलमिल सितारों का.....)

जब तक मानव न उदार होता, तब तक मानव न सत्यग्राही बनता।
जब तक मानव न सत्यग्राही बनता, तब तक मानव न धार्मिक होता।। (1)

सत्य ही सार्वभौम नीति-नियम, राजनीति कानून व संविधान।
आत्म-परमात्मा व विश्व स्वरूप, सच्चा धर्म का भी निज/(शुद्ध) स्वरूप।। (2)

जब तक मानव न साम्य धरेगा, तब तक मानव न धार्मिक होगा।
साम्य में समाहित है क्षमा मृदुता, सरल-सहजता व शुचि नम्रता।। (3)

अवैर-अद्रोह-शांति-सहिष्णुता, समस्त जीवों में एक समानता।
वैश्विक अहिंसा का सच्चा स्वरूप, समता में समाहित शुद्धात्मा रूप।। (4)

शांति को यदि मानव न सेवेगा, तब तक मानव न धार्मिक होगा।
शांति है जीवों का परम गुण/(स्वभाव), शांति पाना हर जीव का भाव/(लक्ष्य)।। (5)

सत्य-समता बिना शांति न मिलती, धन-जन-मान से भी शांति न मिलती।
सत्य-समता से ही शांति मिलती, शांति बिना व्यर्थ सर्व उपलब्धि।। (6)

शांति है धर्म का उत्तम फल, सत्य-समता से मिलता यह फल।
सत्य-समता-शांति है परम धर्म, 'कनकनन्दी' का आत्मिक धर्म।। (7)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 08.01.2015, अपराह्न 4.13

गरिमामय-व्यक्तित्व के हेतु

(चाल : आत्मशक्ति से....., छोटी-छोटी गैया.....)

व्यक्तित्व विकास के कारण जानो, भाव-व्यवहार-वचन को मानो।
दिखावा-आडम्बर-दम्भ को त्यागो, सरल-सहज व विनम्र बनो।। (1)

शांत-गंभीर व प्रसन्न बनो, उदार-सहनशील-धैर्यशील बनो।
आदर्शमय उच्च विचारवान् बनो, दया-दानशील परोपकारी बनो।। (2)

फैशन-व्यसन व संक्लेश त्यागो, अनुशासनहीन व उत्श्रृंखलता त्यागो।
दीनता-हीनता व तुच्छता त्यागो, उद्दण्डता व व्यग्रता को त्यागो।। (3)

आत्म-गौरव सह-आत्मविश्वासी बनो, प्रामाणिक व सत्यग्राही भी बनो।
भाव को विनम्रता से प्रगट करो, अन्य का अपमान-अनादर न करो।। (4)

व्यवस्थित व अनुशासित भी बनो, सज्जन शालीन आत्मविश्वासी बनो।
क्रोध बकवास कुतर्क त्यागो, आलस्य प्रमाद उदासीनता त्यागो।। (5)

निन्दा चुगली परोपवाद को त्यागो, विद्वेष कलह विभेद त्यागो।
दुर्जन संगति को सर्वथा त्यागो, अन्याय अत्याचार भ्रष्टाचार त्यागो।। (6)

चलना बैठना सम्यक् करो, तन-मन-आत्मा को स्वच्छ करो।
प्रदूषण मुक्त भाव-व्यवहार करो, कनक गरिमामय व्यक्तित्व करो।। (7)

व्यक्तित्व विकास से आती विशिष्टता, जिससे मिलती है प्रतिष्ठा।
श्रेष्ठ-ज्येष्ठ काम होते अनेकविध, शांति-संतुष्टि भी मिले विविध।। (8)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, उदयपुर, दिनांक 21.01.2015, रात्रि 4.37

(आध्यात्मिक शिक्षाप्रद रहस्मय कविता)

स्वयं का मूल्यांकन मैं स्वयं भी करूँ

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : छोटी-छोटी गैया....., शत-शत वंदन.....)

स्व मूल्यांकन मैं स्वयं भी करूँ, अन्य द्वारा ही नहीं कराऊँ।
जड़ न स्वयं का मूल्यांकन करता, मैं चेतन स्व मूल्यांकन करता।।

मैं सच्चिदानंदमय अमूर्त रूप, स्वयंभू सनातन अखण्ड रूप।
अनंत गुण पर्यायमय स्वरूप, सत्य समता व अव्याबाध स्वरूप।।

स्व मूल्यांकन मैं इसी से करूँ, तन-मन-इन्द्रियादि रूप न करूँ।
धन-जन-नाम-वय रूप न करूँ, जन्म-मरण-ख्याति-पूजा से न करूँ।।

यह सब कर्मज है विकार रूप, भौतिकमय मिश्र अशुद्ध रूप।
मेरे स्वभाव से ये (सब) होते है भिन्न, यथा आकाश से बादल होता है भिन्न।।

अज्ञानी मोही आसक्त कामुक जन, सत्ता संपत्ति (प्रसिद्धि) से मोहित जन।
भौतिक हानि-लाभ में मोहित जन, कर न पायेंगे कभी मेरा मूल्यांकन।।

कूपमण्डुक न जाने अनंत आकाश, जुगुनू न दे पायेगा सूर्यसम प्रकाश।
चर्म चक्षु न देखे अमूर्तिक द्रव्य, तथाहि अज्ञानी से न होता मम मूल्यांकन।।

सर्वज्ञ कथित सत्य वचन द्वारा, आत्मा के स्वाभाविक लक्षणों द्वारा।
उपलब्ध क्षायोपशमिक भावों के द्वारा, मूल्यांकन करूँ (समाहित) अंतःकरण द्वारा।।

श्रुतेनलिंगेन यथात्मशक्ति समाहितान्तःकरणेन सम्यक्।

समीक्ष कैवल्यसुखस्पृहाणां विविक्तमात्मानमथाभिधास्ते।। (3 समाधितंत्र)

बहिरात्मा शरीरादौ जतात्म भ्रान्तिरान्तरः।
चित्तदोषात्मविभ्रान्तिः परमात्माति निर्मलः।। (5 समाधितंत्र)

शरीर आदि को स्व-स्वरूप जो माने, वह होता है बहिरआत्मा।
शरीर से परे माने (सो) अन्तरआत्मा, अति निर्मल है स्व-परमआत्मा।।

जड़वस्तु का मूल्यांकन करते रागीजन, जिससे होता है आदान-प्रदान।
यह तो सांसारिक लौकिक कर्म, अलौकिक वृत्ति सम्पन्न होते श्रमण।।

परमूल्यांकन से होता रागद्वेष, पक्षपात व लेन-देन के दोष।
आकर्षण-विकर्षण-संक्लेश होते, पर मूल्यांकन अतः निर्दोष।।

योग्य मूल्यांकन पर द्वारा भी ग्राह्य, आत्म लाभ हेतु योग्य वचन ग्राह्य।
वीतराग विज्ञान हेतु विश्लेषण ग्राह्य, विज्ञानघन चिच्चमत्कार सम्पन्न।।

व्यवहार से भी स्व मूल्यांकन करूँ, नैतिक-शालीनता-सदाचार से करूँ।
निस्पृह-निराडम्बर-निर्द्वंद करूँ, सहज सरल निष्पक्षता से करूँ।।

यह मेरी आत्मालोचन आत्मजागृति, स्व मूल्यांकन की मेरी निज प्रवृत्ति।
आत्मविशुद्धि व आत्मनिष्ठा की वृत्ति, 'कनक' चाहे स्व-शुद्धात्मा की उपलब्धि।।

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 24.01.2015, रात्रि 8.27

(आध्यात्म रहस्यमय कविता)

आत्मज्ञ होता है सर्वज्ञ

(राग : छोटी-छोटी गैया.....)

स्वयं को (जो) जानता वह सब जानता, स्वज्ञाता होता है विश्वज्ञाता।
स्व में होते हैं अनंत (है) गुण-पर्याय, स्वज्ञान हेतु चाहिए अनंतज्ञान।। (1)

अनादि से होता है स्व-अस्तित्व, अनादि होता है अनंतकाल।
भूत से भविष्य है अनंत गुणा, स्वस्थिति हेतु ज्ञानार्थे अनंत ज्ञान।। (2)

अनंत परिवर्तन स्वयं का होता, द्रव्य क्षेत्र काल भव भाव में होता।
प्रत्येक परिवर्तन भी होता अनंत, इसके बोध हेतु चाहिए ज्ञान अनंत।। (3)

अनंत गुण भी होते हैं स्वयं में, अनुभाग प्रतिच्छेद होते गुणों में।
अनुभाग प्रतिच्छेद होते अनंत, इसके बोध हेतु चाहिए ज्ञान अनंत।। (4)

अनंत ज्ञान दर्शन वीर्य आनंद, जो प्राप्त करता वह होता आत्मज्ञ।

अनंत ज्ञान दर्शन आनंद हेतु, अनंत वीर्य होता संभोग (अनुभव) हेतु।। (5)

आत्मज्ञ जो होता वह मोक्ष को पाता, शुद्ध-बुद्ध परमात्मा स्वरूप होता।
जन्म-जरा-मरण से रहित होता, अक्षय-अव्यय अनंत काल रहता।। (6)

यह ही सच्चिदानंद परमावस्था, सत्य शिव सुंदर अमृत दशा।
ईश्वर अविनाशी भगवन् अवस्था, 'कनकनन्दी' की यह शुद्ध अवस्था।। (7)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 14.12.2014, प्रातः 6.24
(यह कविता 'प्रवचनसार' से भी प्रेरित)

आध्यात्म रहस्यमय कविता

आवश्यकता नहीं है-भगवान् को मनाने की

(भगवान् के गुणस्मरण-गुणानुवाद-गुणानुकरण ही पूजा)

(राग : छोटी-छोटी गैया.....)

अनंत गुणों के धारी भगवन्, उन्हें क्या अन्य के सहयोग चाहिए!?
जो स्वयं होता है अपूर्ण उन्हें तो अन्य के सहयोग भी चाहिए।। (1)

अनंतज्ञान के धारी भगवन्, उन्हें क्या कौन क्या बतायेगा!?
जो अल्पज्ञ होता है उन्हें भले अन्य कुछ बतायेगा।। (2)

अनंत दर्शन के धारी भगवन्, उन्हें क्या कौन दिखायेगा!?
जो देखने में होता है अयोग्य, भले उन्हें कुछ दिखायेगा।। (3)

अनंतसुख के धारी भगवन्, उन्हें क्या कौन कुछ सुख देगा!?
जो स्वयं होता है दुःखी, भले उन्हें अन्य कुछ सुख देगा।। (4)

अनंतवीर्य के धारी भगवन्, उन्हें क्या कौन (कुछ) सहयोग देगा!?
जो स्वयं होता है दुर्बल भले, उन्हें अन्य कोई सहयोग देगा।। (5)

सत्य अहिंसा क्षमा से पूर्ण, भगवान् न होते हैं (कभी) नाराज।
अतएव उन्हें मनाने के नहीं, होते हैं कुछ भी राज।। (6)

निर्भय निश्चल पावन स्वरूप, होते हैं सदा परमात्मा।
राग द्वेष मोह काम क्रोध मद, ईर्ष्या तृष्णा घृणा रिक्त परमात्मा।। (7)

अतएव वे किसी से न करते, वैरत्व न देते हैं कभी अभिशाप।
कभी न किसी को न देते हैं कष्ट, कभी किसी को न देते हैं पाप।। (8)

भौतिक खाना-पीना आदि की, आवश्यकता नहीं भगवान् को।

भगवान् तो सच्चिदानंद स्वरूप, उन्हें न आवश्यकता जड़ वस्तु की।। (9)

स्वयंभू स्वयंपूर्ण सत्य शिव सुंदर, अव्यय अविनाशी अविकारी।
शुद्ध-बुद्ध आनंद कंद व, सांसारिक (जीवों) दोषों से शून्य आत्मविहारी।। (10)

ऐसा ही जो भगवान् को जाने, तथाहि माने व भक्ति करे।
गुणस्मरण व गुणानुकरण से, वे भी भगवत् गुणों को वरे।। (11)

जिससे पावन भाव होता है, होता है व्यवहार भी पावन।
पाप ताप संकट दूर होते, पुण्य कर्मों का भी होता बंधन।। (12)

क्रमशः आत्मिक गुणों की वृद्धि से, आत्मा से परमात्मा बनता।
भक्त से भगवान् बनकर, अनंत गुणों से सहित होता।। (13)

बीज यथा वृक्ष बनता है, भ्रूण यथा बनता है मानव।
जीव ही बनता है जिनेन्द्र, 'कनक' का भी यह आत्म स्वभाव।। (14)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 13.12.2014, रात्रि 7.51
(यह कविता प्रवचनसार से प्रभावित)

चतुर्थ काल की साधना पंचम काल में निषेध

(चतुर्थ काल की 1000 साधना के समान पंचम काल की एक साधना)

(चाल : जय हनुमान....., आत्मशक्ति....., शत-शत वंदन.....)

कलिकाल है पंचमकाल, हुण्डावसर्पणी दुषमाकाल।
द्रव्य-क्षेत्र-काल-भाव न उत्कृष्ट, शक्ति अनुसार साधना काल/(कर)।।

दव्वं खेत्तं कालं भावं सत्तिं च सुट्ठु णाऊण।
झाणज्झयणं च तहा साहू चरणं समाचरऊ (1007) मूलाचार।।

द्रव्य क्षेत्र काल भावानुसार, साधना करो हे! शक्ति अनुसार।
ध्यान-अध्ययन तथा साधु आचरण, करो हे! साधु सम्यक् प्रकार।।

दव्वं खेत्तं कालं भावं बलवीरियं च णाऊण।
कुज्जा एषणसमिदिं जहोवदिट्ठं जिणमदम्मि।। (490) मू.भा.1

द्रव्य क्षेत्र काल भाव व, बलवीर्य को जानकर।
करो आहार हे! श्रमण, जिनमत के अनुसार।।

बालो वा बुड्ढो वा समभिहदो वा पुणो गिलाणो वा।
चरियं चरदु सजोग्गं मूलच्छेदो जधा ण हवदि।। (230) प्र.सार.

बाल वृद्ध व थके हुए, अथवा रोगी मुनियों को।
चारित्र पालनीय उस योग्य, मूलच्छेद न करके।।

आहारे व विहारे देसं कालं समं खमं उवधिं।
जाणित्ता ते समणो वट्टदि जदि अप्पलेवि सो।। (231) प्र.सार.

देश काल श्रम शक्ति व शरीर बल को जानकर।
आहार-विहार जो करे सो, श्रमण कर्म कम बांधे।।

जं सक्कइ तं कीरइ जं च ण सक्कइ तं च सद्दहणं।
केवलिजिणेहिं भणियं सद्दहमाणस्स सम्मत्तं।। (22) अ.पा.

शक्यानुसार जो करे, अशक्य को जो करे श्रद्धान।
केवली जिनेन्द्र ने कहा, श्रद्धा से होता सम्यक्त्व।।

काले कलौ चले चित्ते देहे चान्नादि कीटके।
एतच्चित्रं यदद्यापि जिनरूपधरा नरा।। यशस्तिलकचम्पु

कलिकाल है चित्त चंचल, देह अन्न के कीट सम।
यह महान् आश्चर्य है, अभी भी जिनरूप धारी मानव।।

करोतु न चिरं घोरं तपः क्लेशासहो भवान्।
चित्त साध्यान् कषायारीन् न जयेद्यत्तदज्ञता।। (232) आ.शा.

क्लेश कारक घोर तप को यदि, न कर पाते हो! श्रमण/(साधक/साधु)।
चित्त साध्य योग्य कषायों को, न जितते तो तेरा अज्ञान।।

रहस्य- भाव से होता है कर्मबंध तो, भाव से होता है मोक्ष।
पुण्य-पाप तथा संवर निर्जरा, होते हैं भाव सापेक्ष।।

संक्लेश भाव से पापबंध तो शुभ भाव से होता पुण्य।
समता शुचिता व वीतरागता से, होती है निर्जरा व मोक्ष।।

उत्कृष्ट ध्यान व साधना हेतु, चाहिए उत्तम संहनन।
आर्यक्षेत्र व चतुर्थकाल, क्षायिक भाव भी उत्तम।।

उत्तम पर्यावरण व शुद्ध, पौष्टिक, सात्त्विक भोजन।
सुयोग्य चतुर्विध संघ विहार, निवास भी नहीं उत्तम।।

अभी तो पंचमकाल है, संहनन हीन व बल क्षीण।
प्रदूषित वातावरण, सत्त्वहीन पानी व भोजन।।

नहीं है क्षायिक सम्यक्त्व, नहीं है उत्तम/(प्रत्यक्ष) ज्ञान।

चतुर्विध संघ भी न उत्तम, विहार निवास न उत्तम।।

प्रदूषित वातावरण में नहीं है, प्राणवायु भी पर्याप्त।
गंदगी बदबू मच्छर, रोगाणु, शीत व उष्ण व्याप्त।।

इन सब कारणों से व, पूर्व उपार्जित पाप से।
होते विविध रोग भी, जिससे शक्ति क्षीण भी।।

उपलब्ध कम भी होती है, शुद्ध उत्तम औषधि।
सुयोग्य आयुर्वेद-वैद्य की, होती दुर्लभ उपलब्धि।।

इन सब कारणों से अभी, न होते हैं जिनकल्पी।
पंचमकाल में सभी, साधु होते हैं स्थविरकल्पी।।

इसी काल में घोर तपों का, किया है आगम में निषेध।
आतापन योग व अभ्रावकाश-योगादि सहित वनवास।।

वर्ष पर्यंत उपवास भी, अभी न संभव साधुओं का।
चौसठ ऋद्धि व मनःपर्ययज्ञान, केवलज्ञान व मोक्ष का।।

प्रतिकूल ऐसी अवस्था में भी, जो करते हैं (साधु) साधना।
चतुर्थकाल की सहस्र (1000) साधना, अभी की एक (1) साधना।।

अनुकूल नदी स्रोत में, नौका को खेना होता सरल।
प्रतिकूल नदी स्रोत में, नौका को खेना न होता सरल।।

लक्ष्य हो एक समान भी, गति तीव्र हो अथवा मंद।
तो भी लक्ष्य प्राप्त करेंगे, कोई शीघ्र कोई विलंब।।

ऐसा ही कहा जिनेन्द्रों ने, तथाहि पूर्वाचार्यों ने।
कनकनन्दी को भी यह मान्य, माना है सभी सूरी ने।।

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 23.01.2015, रात्रि 11.03
(यह कविता मुकेश जैन की जिज्ञासा से भी बनी।)

दान सेवा-परोपकार से सुख व स्वास्थ्य लाभ

(वैज्ञानिक व धार्मिक दृष्टि से)

(चाल : छोटी-छोटी गैया....., शत-शत वंदन.....)

सहयोग दान परोपकार जो करता सो करता है स्व-परोपकार।
इसीसे स्वयं को खुशी मिलती है, मिलता है स्वास्थ्य व पुण्य प्रचुर।।

ग्रंथों/(धर्म) में पहले से ही यह वर्णन हुआ, शोध हुआ अभी विज्ञान में भी।
ऑक्सीटोसिन हार्मोन का होता, उत्सर्जन, जिससे बनता है उदारमन।।

जिससे प्रेम-सहयोग-संबंध बढ़े, सामंजस्य बढ़ता परस्पर में।
मस्तिष्क का वह भाग (भी) सक्रिय होता, जो भाग खुशी भरोसा से संबंधित।।

स्वास्थ्य भी अच्छा होता आयु बढ़ती, तनाव दूर रहे रक्तचाप सामान्य।
विश्वास-सहयोग-संबंध दृढ़ होते, समाज में मिले आदर व सम्मान।।

बढ़ती कृतज्ञता व सकारात्मकता, चैन-रिएक्शन होता है परस्पर में।
दान-सेवा-करते अन्य भी प्रेरित होते, उदार-सहयोग का होता संचार।।

ऐसा ही दयालु व विनम्र होना, प्रशंसा सांत्वना व प्रिय बोलना।
अभिवादन करना आशीर्वाद देना, वात्सल्य प्रेम से मुस्कुराना।।

आहार औषधि ज्ञानदान देना, अभय वसतिका उपकरण देना।
वैयावृत्ति करना व उपसर्ग हरना, साधु हेतु सर्वोत्तम दान देना।।

इससे पुण्य-ज्ञान-आरोग्य बढ़े, तीर्थंकर प्रकृति का (भी) होता बंध।
अंत में मोक्ष शाश्वत सुख मिले, 'कनक' का लक्ष्य है पाना निर्वाण।।

सप्त तत्त्व चिन्तन

रचयिता-डॉ. पारसमल अग्रवाल

(चाल : श्री सिद्ध चक्र का पाठ.....)

सात तत्त्व का पाठ करो नित याद, ध्यान से प्राणी, यह कहती है जिनवाणी।

मैं त्रिकाली ध्रुव एक जीव तत्त्व, मुझमें नहीं है अजीव तत्त्व।
नहीं करो राग अरू द्वेष, जो अति दुःखदानी, यह कहती है जिनवाणी।। (1)

शुभ बंध के फल में ना फूलो, भाई अशुभ बंध में ना झूलो।
बस रहो स्वयं में लीन, जो सुख की खानी, यह कहती है जिनवाणी।। (2)

पर का अवलंबन तुम छोड़ो, विषयों से नाता तुम तोड़ो।
इस तप से बनती आत्मा सिद्ध समानी, यह कहती है जिनवाणी।। (3)

माता जिनवाणी के निश्चय व्यवहार प्रतीक स्वरूप

(राग : झिलमिल सितारों का....., नरेन्द्र छन्द.....)

जिनवाणी माता के विविध रूप...निश्चय-व्यवहार प्रतीक स्वरूप।
जिनेन्द्रवाणी है माँ जिनवाणी...अनेकान्तमय स्याद्वाद वाणी।।ध्रु.।।

अनादि अनंत भी माँ जिनवाणी...अनादि अनंत जिनों की वाणी।
सर्वज्ञ कथित है सर्वज्ञानमयी...सर्वभाषारूपा अनेकान्तमयी।।

अनिबद्धारूपा दिव्यध्वनिरूपा...भाषा-अभाषा-सर्वभाषामयी।
श्रोतानुसार होती परिवर्तनमयी...मनुष्य तिर्यंच देव भाषामयी।। (1)

निबद्धारूपा होती (है) गणधर रचिता...ग्यारह अंग चौदह पूर्व स्वरूपा।
अथवा चार अनुयोग स्वरूपा...संख्यात असंख्य अनंत स्वरूपा।।

तद्नुकूल आचार्य रचित रूपा...गद्य व पद्य सूत्र स्वरूपा।
चूर्णी भाष्य व वार्तिक रूपा...टीका अनुवाद मीमांसा रूपा।। (2)

भोज ताड ताम्र पत्र लिखिता...शिला फलक कागज लिखिता।
कम्प्यूटर सी.डी. टेप लिखिता...हस्त प्रेस या यंत्र लिखिता।।

जिनेन्द्र प्रतिमा सम प्रतीक रूपा...स्थापना निक्षेप कल्पना रूपा।
सरस्वती माता आलंकारिक रूपा...रूपकमयी सिद्ध प्रतिमा रूपा।। (3)

चतुर्भुज है चार अंग स्वरूपा...शुक्लवर्णा है पावन रूपा।
वीणा प्रतीक सप्त भंग स्वरूपा...हंस प्रतीक भेद-विज्ञानरूपा।।

ज्ञानपयदायिनी सरस्वतीमाता...जिनवाणी दिव्यध्वनिगात्रा।
मोक्ष उपादेय मार्गदर्शिका...'कनकनन्दी' के ध्येय दर्शिका।। (4)

विभिन्न-विषय ज्ञान से विविध लाभ

(राग : छोटी-छोटी गैया....., यमुना किनारे.....)

बहुविध/(विभिन्न विषय) ज्ञान से नाना/(बहु) लाभ होता है, चिंतन का क्षेत्र बड़ा होता है।
समन्वय समीक्षा की शक्ति आती है, विचार विनिमय की युक्ति आती है।।

बहुविध भाषा का ज्ञान होने से, बहुविध संस्कृति का ज्ञान भी होता है।
भाव विनिमय सरल होता है, प्रेम संगठन की वृद्धि होती है।।

अज्ञान अंधकार दूर होता है, हठाग्रह-दुराग्रह दूर होता है।
संकीर्णता-जड़ता दूर होती है, उदारता-व्यापकता की वृद्धि होती है।।

उत्तरोत्तर जब ज्ञान होता है, पूर्व की अज्ञानता का भान होता है।
अंधकार प्रकाश से यथा मिटता, ज्ञान बढ़ने से अज्ञान मिटता।।

दुर्विदग्ध अल्पज्ञानी घमण्डी होते, हठग्राही संकीर्ण व कुतर्की होते।
हिताहित विवेक से रहित होते, स्व-पर अहितकारी काम करते।।

ज्ञान से अनुभव जब बढ़ता, कूपमण्डुकता का ज्ञान भी होता।
स्व-अज्ञानता का नाश भी होता, ज्ञानार्जन हेतु भाव बढ़ता।।

नीति सदाचार का ज्ञान होने से, नैतिक सदाचारी जीव बनता।
आयुर्वेद ऋतुओं का ज्ञान होने से, स्वास्थ्य रक्षा नियम भी सही पलते।।

सभ्यता संस्कृति का ज्ञान होने से, सुसभ्य सांस्कृतिक जीव बनते।
जिससे समाज राष्ट्र श्रेष्ठ बनते, विविध प्रकार के विकास होते।।

पर्यावरण व अहिंसा के ज्ञान से, पर्यावरण-जीवों की सुरक्षा होती।
जिससे तन-मन स्वस्थ्य भी होते, विश्व में विविध विकास होते।।

आध्यात्मिक ज्ञान तो महान् ज्ञान, जिससे जीवन होता महान्।
मानव इसी से महामानव होता, इसीसे ही अमृत तत्त्व को पाता।।

बहुविध ज्ञान अतः करो हे! मानव, सदुपयोग से बनो महामानव।
दुरुपयोग ज्ञान का कभी न करो, 'कनकनन्दी' का मत/(राय) स्वीकार करो।।

स्वात्माभिमुख सवित्ति : है श्रुतज्ञान

(सुनना या केवल श्रुत पढ़ना नहीं है श्रुतज्ञान)

(राग : रघुपति राघव....., सायोनारा.....)

श्रवण ज्ञान ही नहीं श्रुतज्ञान...श्रुत पढ़ना ही नहीं श्रुतज्ञान।
यह तो मतिज्ञान होता नियम...मतिपूर्वक होता है श्रुतज्ञान।।ध्रु.।।

स्मृति ज्ञान भी नहीं (है) श्रुतज्ञान...अनुमान तर्क भी नहीं श्रुतज्ञान।
आवाय धारणा भी नहीं श्रुतज्ञान...'स्वात्माभिमुख संवित्ति' होता श्रुतज्ञान।।

वाचना पृछना आदि धर्मोपदेश...अंतरंग तप ये होता विशेष।
आत्म-संवित्ति युक्त अंतरंग तप है...आत्म-संवित्ति रिक्त पठन मात्र है।। (1)

स्व-अध्ययन ही होता स्वाध्याय...स्व-आत्म-स्वभाव का होता स्वाध्याय।
स्व-आत्मरूप का चिन्तन ध्यान है...यथार्थ से होता सुश्रुत ज्ञान है।।

आत्महित प्राप्ति व अहित परिहार...ज्ञान दाता ध्यान ध्येय पुरस्सर।
आत्म विशुद्धि हेतु भावना जो होती...यह है श्रुतज्ञान की सही पद्धति।। (2)

स्वात्माभिमुख बिना जो होता श्रुतज्ञान...वह है मतिज्ञान आगम प्रमाण।
केवल पढ़ना जो श्रुत का होता...द्रव्यश्रुत उसे आगम कहता।।

सम्यक्त्व बिना जो श्रुतज्ञान होता...वह कुश्रुतज्ञान आगम कहता।

इसीसे राग-द्वेष दूर न होते...धोराति मोही के संक्लेश बढ़ते।। (3)

स्वाध्याय सहित सुश्रुतज्ञान है...शम (व) समता को बढ़ाने वाला है।
ज्ञान वैराग्य को बढ़ाने वाला है...उदार सहिष्णुता विकास वाला है।।

आत्मा-अनात्म को जानने वाला है...भेद विज्ञान को बढ़ाने वाला है।
संवर-निर्जरा मोक्ष के दाता है...'कनकनन्दी' तो इसे चाहता है।। (4)

स्वाध्याय का स्वरूप एवं फल

श्री गुरु चरण मूले-ग्रंथ स्वाध्याय काले।
सत्य/(तत्त्व) ज्ञान प्राप्ति-मिथ्यात्व टले।।श्री गुरु।। (टेक)

अज्ञान तमस छटे-ज्ञान ज्योति सुप्रकाशे।
हेय उपादेय ज्ञेय-सर्व/(सत्/सभी) प्रकाशे।।सत्य ज्ञान...।। (1)

राग द्वेष मोह हेय-अतएव त्यजनीय।
ज्ञानानन्द उपादेय-सर्वथा ग्राह्य।।सत्य ज्ञान...।। (2)

सर्व द्रव्य होते ज्ञेय-जीव अजीवादि मय।
सप्त तत्त्व समन्वय-पदार्थ ज्ञेय।।सत्य ज्ञान...।। (3)

परम तप स्वाध्याय-संयत मन इन्द्रिय।
असंख्य कर्म निर्जरा-स्वाध्याये ज्ञेय।।ग्रंथ स्वाध्याय...।। (4)

कषायों के उपशमे-समता शांति संयमे।
आरम्भ भोग विहीने-आनन्द झरे।।ग्रंथ स्वाध्याय...।। (5)

पुण्य बंध सातिशय-ज्ञानानन्द उपादेय।
अंत मोक्ष प्राप्ति ज्ञेय-'कनकनन्दी' के ध्येय।।ग्रंथ स्वाध्याय...।। (6)

स्वाध्याय का स्वरूप-विषय एवं फल (17)

(तर्ज : नगरी-नगरी.....)

बड़ा सुख होता, आनंद होता, गुरुवर से ज्ञान जो होता।
मध्याह्न प्रातः होता स्वाध्याय, गुरुवर से ज्ञान जो पाता।।

वाचना, पृच्छना, समाधान गुरुवर से ज्ञान जो पाता।
मनन, चिन्तन, अनुप्रेक्षा होता हर विधा का ज्ञान जो होता।। बड़ा सुख...

प्रथमानुयोग से गुरुवर हमें, प्राचीन इतिहास का ज्ञान देते।

प्राचीन शिक्षा संस्कार नीति, संस्कृति, सभ्यता भी देते।। बड़ा सुख...

समाज शास्त्र, राजनीति ज्ञान, कानून कला वास्तु देते।
युद्ध-विग्रह समाधान ज्ञान, स्वप्न शकुन का पाठ पढ़ाते।। बड़ा सुख...

ज्ञान-विज्ञान यांत्रिक ज्ञान, देश-विदेश का ज्ञान देते।
नदी-पर्वत ग्राम नगर, प्रकृति प्रेम का पाठ पढ़ाते।। बड़ा सुख...

करणानुयोग है गहन ज्ञान, गणित द्वारा ही पाठ पढ़ाते।
लौकिक गणित सामान्य ज्ञान, अलौकिक भी जो बतलाते।। बड़ा सुख...

परमाणु से है प्रारंभ होता, ब्रह्माण्ड तक का मापन होता।
सूर्य, चन्द्र, ग्रह, नक्षत्र आदि, ब्रह्माण्डीय ज्ञान हमें भी होता।। बड़ा सुख...

ब्रह्माण्डीय काल गणना आदि, कर्म प्रकृति की गणना होती।
ब्रह्माण्डीय जीव अजीव आदि, समस्त द्रव्यों की गणना होती।। बड़ा सुख...

चरणानुयोग से हमें सिखाते, सदाचार का पाठ पढ़ाते।
प्रथम भेद है श्रावकाचार, गृहस्थ संबंधी नीति सिखाते।। बड़ा सुख...

पंचाणुव्रत में हमें सिखाते, भ्रष्टाचार से हमें बचाते।
सप्त व्यसन का त्याग दिलाते, अष्टमूलगुण हमें दिलाते।। बड़ा सुख...

उत्कृष्ट भेद है श्रमणाचार साधु संबंधी पाठ पढ़ाते।
पंचमहाव्रत हमें सिखाते, समस्त पापों का त्याग बताते।। बड़ा सुख...

पंच समिति का पाठ पढ़ाते, सम्यग् प्रवृत्ति की शिक्षा देते।
दश-धर्मों का पाठ पढ़ाते, वैश्विक धर्म की शिक्षा भी देते।। बड़ा सुख...

द्रव्यानुयोग है सूक्ष्माति ज्ञान, आध्यात्म विज्ञान सहित ज्ञान।
दर्शन तर्क से युक्त भी ज्ञान, वैश्विक दृष्टि का महान् ज्ञान।। बड़ा सुख...

आत्मिक विकास ज्ञान सिखाते, आत्मिक शक्ति का ज्ञान भी देते।
शुद्धात्मा होने का पाठ पढ़ाते, आत्म वैभव का ज्ञान भी देते।। बड़ा सुख...

षट्द्रव्यों का ज्ञान भी देते, सापेक्ष सिद्धांत हमें सिखाते।
सिद्धांत एकीकृत हमें सिखाते, विज्ञान से परे ज्ञान भी देते।। बड़ा सुख...

भौतिक रसायन अणु सिद्धांत, मनोविज्ञान व जीव सिद्धांत।
इससे श्रेष्ठ का ज्ञान भी देते, परम विज्ञान पाठ पढ़ाते।। बड़ा सुख...

गुरुदेव से जो पाठ हैं पढ़ते, लोक लोकोत्तर काम में आते।
तनमनात्मा की शुद्धि बताते, पवित्रता का पाठ पढ़ाते।। बड़ा सुख...

स्व पर विश्व के हित बताते, विश्वशांति की शिक्षा भी देते।
ऐसा ज्ञान सब कोई पाये, ''कनकनन्दी'' भी यह भावना भाये।।

हे माँ! जिनवाणी हमारी रक्षा करो सबको शिक्षा दो (48)

''धार्मिक विकृतियों को दूर करने हेतु माँ जिनवाणी से प्रार्थना''

(तर्ज : प्रभु नेमि बता जाना.....)

जिनवाणी हमें बतला, सच्चा धर्म रूप सदा, यथा सर्वज्ञ ने जाना।
द्रव्य क्षेत्र काल भाव से...निश्चय व्यवहार से, यथा गुरुओं ने माना।।...
उत्सर्ग अपवाद से...वय रोग शक्ति दृष्टि से, यथा मूल न लोप हुए।
यथा माता गुरु कहते...तथाहि हमें बतला सापेक्ष दृष्टिकोण से।।

जिनवाणी हमें...1

तुमसे हमने सीखा..., सत्य, साम्य, शांति, धर्म, यथा प्रभु ने माना।
अभी तो धर्म क्षेत्र में भी...इससे विपरीत पाया, प्रायोगिक जीवन में।।

जिनवाणी हमें...2

तुमने तो सत्य कहा..., रत्नत्रय है आत्म धर्म, व्यवहार निश्चय से।
अभी तो यह पाया है..., सत्ता संपत्ति प्रसिद्धि ही प्राप्त उपभाग धर्म।।

जिनवाणी हमें...3

अनेकान्त समन्वय ही..., व्यक्ति समाज दृष्टि से, शांति, एकता का मार्ग है।
परन्तु मैंने तो पाया..., एकांत विघटन है, समाज व संघों में।।

जिनवाणी हमें...4

तुमसे हमने सीखा...समता व निस्पृहता श्रमणों की सच्ची साधना।
किन्तु हमने जो पाया अभी...सच्चे साधु की उपेक्षा, धन, नाम, साधु पूजा।।

जिनवाणी हमें...5

त्याग वैराग्य मौन गया...तृष्णा दिखावा चपलता मनोरंजन फूहड़ता।
विज्ञापन प्रसिद्धि बोली...खाना पीना मजा मस्ती धर्म के नाम चला।।

जिनवाणी हमें...6

ध्यान-अध्ययन लोप हुआ...साधु से समाज चाहे, धन-जन व मनोरंजन।
जो साधु इसके दाता...वह ही साधु-महात्मा, अन्यथा नहीं है अच्छा।।

जिनवाणी हमें...7

हे जिनवाणी मेरी माता...तुम ही करो रक्षा अन्यथा नहीं है सुरक्षा।
''कनकनंदी'' की है इच्छा सबको दो सत् शिक्षा, अन्यथा है बड़ी दुर्दशा।।

जिनवाणी हमें...8

''पढ़ाई > अध्ययन > स्वाध्याय''

(राग : फूलों का तारों का....., क्या मिलिये ऐसे.....)

पढ़ाई अध्ययन स्वाध्याय को जानो...उत्तरोत्तर तीनों को श्रेष्ठ मानो।
पढ़ाई केवल है वाचना मात्र...अर्थ ज्ञान बिना रीडिंग मात्र।।

तोता जैसे पढ़ता है पाठ...ज्ञान-आचरण बिन रटता पाठ।
वैसा ही जो मानव करता...वह भी तोता के जैसे पढ़ता।।

अपच भोजन सम यह पाठ होता...स्वार्थ व गर्व को जन्म देता।
आचरण-अनुभव से रहित होता...सत्य-समता-शांति न देता।। (1)

अध्ययन/(पाठ) इसी से भी परे होता...ग्रंथों का अनुशीलन होता।
ग्रंथ निहित सत्य-तथ्यों का...समालोचना व व्याख्यान होता।।

तर्क-वितर्क मंथन भी होता...घटना-विचारों को जोड़ा जाता।
भावना-अनुभव से रिक्त होता...व्यापार के समान काम होता।। (2)

इसी से भी परे स्वाध्याय होता...आचरण-अनुभव से रहित होता।
न्याय नीति सदाचार/(शिष्टता) युक्त होता...भावना संवेदना सहित होता।।

पर पीड़न का काम न होता...सादा जीवन उच्च विचार होता।
हिताहित विवेक सहित होता...स्व-पर हितकर भाव/(काम) होता।। (3)

स्वाध्याय से स्व-पर हित होता...महान् कार्य भी इसी से होता।
स्वाध्याय से स्व-अध्ययन होता...स्वगुण-दोषों का अध्ययन होता।।

स्वाध्याय से वाचन-अध्ययन होते...स्वाध्यायी मानव महान् होते।
स्वाध्याय परम तप भी होता...'कनक' स्वाध्याय सतत करता।। (4)

आचरण व अनुभव बिना पुस्तकीय ज्ञान से हानि

(राग : रघुपति राघव....., सायोनारा.....)

आचरण बिना पुस्तकीय/(रटन्त) ज्ञान से।
लक्ष्य न प्राप्त होता केवल चित्र (नक्सा) से।।

भोजन पाचन बिना शक्ति/(ऊर्जा) न मिलती।
अजीर्ण (व) रोग होते, शक्ति भी घटती।।
तथाहित पुस्तकीय ज्ञान से होता है। पाचन बिना वह अहित करता है।।
अहंकार ईर्ष्या घृणा उत्पन्न होते हैं। संकीर्ण अनुदार भाव भी होते हैं।।
भोजन शब्द से न भूख मिटती है। ग्रंथज्ञान से न भ्रांति मिटती है।।
भगवान् बोलने से न अनुभव होता है। अनुभव से ही यह संभव होता है।।
तोता रटन्त से न अनुभव होता है। टेप रेकार्ड को न ज्ञान होता है।।
केवल दर्पण को न ज्ञान होता है। देखने वालों को ही ज्ञान होता है।।
पुस्तक ज्ञान तो साधन मात्र है। दर्पण यथा साधन मात्र है।।
साधन से साध्य प्राप्त करणीय। पुस्तक केवल नहीं है रटनीय।।
शब्द से भी अर्थ ज्ञान करणीय। अर्थ ज्ञान से भी भाव करणीय।।
भाव सहित भी सदा चरणीय। 'कनकनन्दी' को यह माननीय।।

शिक्षा की गाथा-व्यथा-आत्मकथा

(तर्ज : मेरे मन की अंध तमस्....., है यही समय की पुकार.....)
सुनो हो बच्चों! सुनो-सुनो हो बच्चों...2
मैं गाता हूँ शिक्षा की गाथा, मैं गाता हूँ शिक्षा की व्यथा।
मैं गाता हूँ शिक्षा की वृथा, मैं गाता हूँ शिक्षा की आत्मा।। सुनो...
अक्षर कला अंक विज्ञान केवल रटना नहीं है शिक्षा,
अक्षर कला अंक विज्ञान केवल उत्तीर्ण नहीं है शिक्षा,
अक्षर कला अंक विज्ञान केवल लिखना नहीं है शिक्षा,
अक्षर कला अंक विज्ञान केवल पढ़ाना नहीं है शिक्षा।। सुनो...
धार्मिक ग्रंथ पूजा-पाठ भी केवल रटना नहीं है शिक्षा,
धार्मिक ग्रंथ पूजा-पाठ भी केवल उत्तीर्ण नहीं है शिक्षा,
धार्मिक ग्रंथ पूजा-पाठ भी केवल लिखना नहीं है शिक्षा,
धार्मिक ग्रंथ पूजा-पाठ भी केवल पढ़ाना नहीं है शिक्षा।। सुनो...
इनकी उपयोगिता में सुशिक्षा की रहती है आत्मा,
सुशिक्षा के प्रचार में शिक्षा की है बोलती गाथा,
शिक्षा के अनुपयोग में शिक्षा की है चलती व्यथा,

शिक्षा के दुरुपयोग से समस्त शिक्षा होती वृथा।। सुनो...

संस्कार संस्कृति सदाचार है सभी शिक्षा की होती आत्मा,
इनके बिना सभी शिक्षा है देह की स्थिति बिना आत्मा।। सुनो...

इनके बिना रावण कंस स्व-पर नाशक साक्षर राक्षस,
इनसे युक्त तीर्थेश बुद्ध प्रहलाद कबीर पवित्र अंतस।। सुनो...

तुम भी बच्चों पढ़ो भी गुनो आचरण करो सदा सदाचार,
तुम भी बच्चों पढ़ो भी गुनो कभी न करो भ्रष्टाचार,

तुम भी बच्चों पढ़ो भी गुनो कभी न करो मिथ्याचार,
तुम भी बच्चों पढ़ो भी गुनो, सदा ही करो शिष्टाचार।। सुनो...

तुम भी बनो सभ्य शिक्षित, तुम भी बनो देश रक्षक,
तुम भी बनो सभ्य शिक्षित, तुम भी बनो धर्म रक्षक,

तुम भी बनो सभ्य शिक्षित, तुम भी बनो आत्म रक्षक,
तुम भी बनो सभ्य शिक्षित, कनकनंदी के प्रिय बालक।। सुनो...

छोटा भोला छात्र हूँ!

(तर्ज : नन्हा-मुन्ना राही हूँ.....)

छोटा भोला छात्र हूँ, ज्ञान साधक पात्र हूँ,
राह में एकला हूँ...सत्य के साथ हूँ...श्रद्धा के साथ हूँ...
निष्ठा के साथ हूँ...आशा के साथ हूँ...।टेक।।

ज्ञान भले ग्रंथों में लिखा होता हो, गुरुओं से ज्ञान प्राप्त सदा होता हो।...2
प्रकृति के हर कण गाथा गाते हो, मेरी ही पात्रता से मुझे प्राप्त हो।।
सत्य के साथ...श्रद्धा के साथ हूँ...छोटा।।1।।

अनंत है ब्रह्माण्ड अनंत है ज्ञान, पात्रता के अनुसार प्राप्त हो ज्ञान।...2
सिन्धु समक्ष मैं होता हूँ बिन्दु, तथापि मैं हूँ सिन्धु का बिन्दु।।
सत्य के साथ...श्रद्धा के साथ हूँ...।।2।।

बिन्दु-बिन्दु से ही सिन्धु भरता, बिन्दु-बिन्दु विद्या से ज्ञान बढ़ता।...2
बूँद-बूँद विद्या हेतु बनूँ जिज्ञासु, सत्यग्राही शुद्धभावी ज्ञान पिपासु।।
सत्य के साथ...श्रद्धा के साथ हूँ...।।3।।

हमारे पूर्वज जब सर्वज्ञ हुए, विश्वगुरु पदवी हमने पाए।...2

भौतिक ज्ञानी जब आगे चले हैं, आध्यात्मिक हम क्यों पीछे चलेंगे।।
सत्य के साथ...श्रद्धा के साथ हूँ...।।4।।

जड़ में न सुख और अनंत ज्ञान, तथापि भौतिकज्ञानी करे अभियान।...2
आत्मा में है सुख और अनंत ज्ञान, साधना के बल पर करूँ मैं ज्ञान।।
सत्य के साथ...श्रद्धा के साथ हूँ...।।5।।

इसी हेतु मौनव्रती एकांतवासी, निस्पृह वृत्ति हूँ संतोषधारी।...2
ख्याति लाभ पूजा से मैं दूर ही रहूँ, ज्ञान देवता की मैं साधना करूँ।।
सत्य के साथ...श्रद्धा के साथ हूँ...।।6।।

'कनकनन्दी' कहे ऐ मानव जागो, भौतिकता के सारे बंधन त्यागो।...2
ज्ञानामृत हेतु करो सिन्धु मन्थन, सत्यं शिवं सुंदर से महान् बनो।।
सत्य के साथ...श्रद्धा के साथ हूँ
निष्ठा के साथ...आशा के साथ हूँ...।।7।।

''मेरी ज्ञानार्जन पद्धति''
(सर्वोदय शिक्षा पद्धति)

(राग : आत्मशक्ति से ओतप्रोत.....)

मेरी स्वाध्याय/(शिक्षा) पद्धति का मैं कर रहा हूँ वर्णन,
स्व-पर हित हेतु करके शुभ चिन्तन।

बाल्यकाल से मेरी रूचि रही जानने को सत्य का ज्ञान,
पढ़ना-लिखना प्रश्न करना करने हेतु परिज्ञान।।ध्रु.।।

सनम्र सत्यग्राही मैं रहता हूँ सदा ही काल,
गुणग्रहण व दोष-हरण करता हूँ सदा ही काल।

चिन्तन स्मरण समीक्षा करता हूँ सदा सर्वदा,
परीक्षण-निरीक्षण तुलना भी करता हूँ सदा सर्वदा।। (1)

विभिन्न भाषा व्याकरणों का करता हूँ मैं अध्ययन,
धर्म-दर्शन व गणित विज्ञान का करता हूँ मैं अध्ययन।

इतिहास पुराण खगोल भूगोल कानून व संविधान,
आयुर्वेद मनोविज्ञान का भी करता हूँ अध्ययन।। (2)

अलौकिक गणित सहित कर्मसिद्धांत विशेष,

आध्यात्मिक प्रगति हेतु द्रव्यानुयोग विशेष।

देश-विदेशों के विविध साहित्यों का करता हूँ अनुशीलन,
सबका यथायोग्य समन्वय करता हूँ सापेक्ष प्रमाण।। (3)

अनेकान्त की पद्धति से करता हूँ समन्वय,
स्याद्वाद की पद्धति से करता हूँ लेखन कथन।

वाद-विवाद-कुतर्क से रहता हूँ सदा मैं मुक्त,
अव्यवस्थित संशयज्ञान से करता हूँ स्वयं को (मैं) मुक्त।। (4)

सूक्ष्म-व्यापक ज्ञान सहित करता हूँ मैं अनुभव,
अनुभव आगम सहित करता हूँ पावन-भाव।

समता-शांति-एकाग्रता से करता हूँ मैं अध्ययन,
एकांत मौन व स्वच्छ स्थान में करता हूँ ध्यान-अध्ययन।। (5)

अध्ययन अध्यापन मेरा होता स्व-पर आनंददायी,
सत्य समता समन्वयकर होता विकासदायी।

शुद्ध प्रासुक सात्विकाहार का करता हूँ मैं सेवन,
दूध घी व फल सब्जी करता हूँ अधिक सेवन।। (6)

प्राकृतिक वातावरण में करता हूँ भ्रमण योगासन,
व्यायाम प्राणायाम सहित प्रकृति के विविध ज्ञान।

विद्यार्थी अवस्था से ही मैं कर रहा हूँ ज्ञानदान,
लेख साहित्य कविता रूप में करता लेखन-काम।। (7)

केवल पढ़ना रटना भी नहीं रहता है मेरा (काम) लक्ष्य,
दूसरों को बताना जताना भी नहीं रहता है मेरा लक्ष्य।

धन-मान-नाम कमाना भी नहीं है मेरा लक्ष्य,
स्व-पर-विश्वहित हेतु करता हूँ मैं ज्ञानार्जन।। (8)

बालक विद्यार्थी सम करता हूँ मैं ज्ञानार्जन,
स्व-पर-विश्वहित हेतु करूँ ज्ञान का नियोजन।

ख्याति-पूजा-लाभ रहित करता हूँ यह सब काम,
'कनक' का परम लक्ष्य बनना ''ज्ञानानन्द पूर्ण''।। (9)

अलौकिक गणित-आध्यात्मिकमय कविता

''मेरी भावना-परम ज्ञान हेतु मुझे चाहिये स्व-ज्ञान''

(राग : तेरे प्यार का आसरा.....)

परम सत्य को (मैं) जानना चाहता हूँ।
इन्द्रिय मनातीत (मैं) जानना चाहता हूँ।।
अल्पज्ञ से परे (मैं) जानना चाहता हूँ।
भौतिक से परे (मैं) जानना चाहता हूँ।। (1)

यंत्र से परे का ज्ञान चाहता हूँ।
भौतिक विज्ञानी से भी परे चाहता हूँ।।
जिनोम से परे जानना चाहता हूँ।
डार्क-एनर्जी-मैटर से परे चाहता हूँ।। (2)

सामान्य मानव ज्ञात ज्ञान-विज्ञान से।
नीति-नियम-न्याय संविधान ज्ञान से।।
रीति-रिवाज परम्परा की सीमा से।
संकीर्ण पंथ-मत भाषा विधान से।। (3)

जानना चाहता हूँ परम सत्य को।
सत्य को जानने वाला परम ज्ञान को।।
ज्ञान के आधारभूत स्व-आत्मतत्त्व को।
(परम) सत्य के ज्ञान हेतु 'कनक' जानो हे! स्व को।। (4)

नृत्य-परेड-बोध गीत

प्राचीन गौरव-आधुनिक बोध से हे भारतीय! पुनः विश्वगुरु बनो!

(राष्ट्रीय उद्‌बोधन कविता)

भारत ओहो भारत...3
कितना सुंदर देश हमारा...कितनी गरिमा गाथा...(स्थायी)...

हमारे यहाँ जन्म लिया है...अध्यात्म जैसी शिक्षा...2
गणित विज्ञान आयुर्वेद भी...यहाँ की महान् शिक्षा...2...(1)
हमारे यहाँ जन्म लिया है...तीर्थंकर महाज्ञानी...2

सदय हृदय महात्मा बुद्ध...पतञ्जली जैसा ध्यानी...2...(2)

उमास्वामी यथा सूत्रकार हुए...वीरसेन महाज्ञानी...2
चरक सुश्रुत आयुर्वेदाचार्य...अक्षपाद अणुज्ञानी...2...(3)

तर्कधुरन्धर अकलंक सूरी...समन्तभद्र भी तथा...2
यतिवृषभ है महागणितज्ञ...ब्रह्माण्ड की रची गाथा...2...(4)

वराहमिहिर भास्कराचार्य भी...महावैज्ञानिक हुए...2
जिनसेनस्वामी रविषेणाचार्य...महाकाव्यकार हुए...2...(5)

वाल्मिकी व वेदव्यास भी तथा...कालिदास कवि हुए...2
जयदेव तथा बैजू बावरा...वैश्विक कविता गाये...2...(6)

इत्यादि कारण भारत भी कभी...बना था विश्व का गुरु...2
अभी तो भारत स्वतन्त्र हुए भी...नहीं बना विश्वगुरु...2...(7)

भ्रष्टाचार प्रदूषण रोगों का...बना रहा शिरमौर...2
अभी तो स्व उद्धार करो है...यह है युग पुकार...2...(8)

प्राचीन गौरव आधुनिक बोध...करके हे! समन्वय...2
पुरुषार्थ द्वारा विश्वगुरु बनो...'कनक' करे आह्वान/(ललकार/पुकार)...(9)

सुविद्या एवं कुविद्या का स्वरूप एवं फल

(सुविद्या (ज्ञान-शिक्षा) का स्वरूप एवं सुफल तथा कुविद्या का स्वरूप एवं कुफल)

(राग : दुनिया में रहना है तो.....)

विद्या यदि संकीर्ण या बिकाऊ होगी...सर्वोदय कारक नहीं बनेगी।
विद्या यदि उदार व निःस्वार्थ होगी...सर्वोदय के हेतुभूत विद्या बनेगी।। (धत्ता)

आत्मशक्ति विकासक होती है विद्या...तोता जैसे रटन्त न होती है विद्या।
विनय विकासक होती है विद्या...विनय विनाशक होती कुविद्या।। (1)

विनय से विद्या का विकास होता...घमण्ड से विद्या का विनाश होता।
भोजन पचने से यथा बल मिलता...अपच भोजन से तथा बल घटता
/(रोग मिलता)।। (2)

सुखदायक होती सम्यक् विद्या...कष्टदायक होती संकीर्ण विद्या।
मुक्तिदायक होती आध्यात्म विद्या...भुक्तिदायक होती भौतिक विद्या।। (3)

चारित्र निर्माणकर्ती यथार्थ शिक्षा...साक्षरी राक्षस बने वह कुशिक्षा।
तीर्थंकर निर्मात्री होती सुशिक्षा...रावण कंस निर्मात्री होती कुशिक्षा।। (4)

सनम्र सत्यग्राही होते ज्ञानी सुजन...अहंकारी हठग्राही होते मूर्ख कुजन।
योग्य बीज से यथा बनते हैं वृक्ष...नष्ट बीज से नहीं बनता वृक्ष।। (5)

गुणी-सुज्ञानी तो सर्वोदय करता...कुज्ञानी स्व-पर विनाशकारी बनता।
तीर्थंकर बुद्ध सम सुज्ञानी होते...रावण कंस सम कुज्ञानी होते।। (6)

अनुभव सहित जो ज्ञान होता...दुधारू थन सम उपकारी बनता।
अनुभव रहित जो ज्ञान होता...अज गल थन सम व्यर्थ ही बनता।। (7)

सुफलदायी होता क्रमबद्ध सुज्ञान...विपरीत फलदायी होता कुज्ञान।
स्वास्थ्यप्रद अनुपान युक्त सुखाद्य...स्वास्थ्यहर अनुपान रिक्त कुखाद्य।। (8)

आत्मविश्वास सह आचरण से युक्त...वही ज्ञान होता है सम्यक्त्व युक्त।
तीन कोणों से युक्त जो क्षेत्र होता...वह क्षेत्र त्रिभुजाकार भी होता।। (9)

निरपेक्ष ज्ञान नहीं होता सम्यक्/(यथार्थ)...असंयुक्त रेखा से न बनता क्षेत्र।
ताना-बाना से यथा बनता वस्त्र...असंयुक्त धागों से न बनता वस्त्र।। (10)

स्व-पर उपकारी वह होता सुज्ञान...दीप सम स्व-पर वह प्रकाशवान।
ज्ञान नहीं होता जानकारी मात्र से...प्रकाश न होता दीपचित्र मात्र से।। (11)

ज्ञान है आनन्ददायी अनुभव से युक्त...सदाचार सहित व नम्रता युक्त।
स्व-पर प्रकाशी व उपकार से युक्त...'कनक' सदा इसी में प्रयासरत।। (12)

श्रुतपञ्चमी महोत्सव (साहित्य पर्व) (10)

(कविता एवं श्लोगन)

(राग : उड़े जब-जब जुल्फे तेरी.....2)

श्रुतपर्व महोत्सव आया...2 कि दिल में आनंद/(मंगल) छाया...जिनवरजी
जिनवाणी का पर्व है आया...2 कि ज्ञानानन्द रस पाया...2...जिनवरजी

पूर्वाचार्यों को शीश नवाया...2 ऽऽकि उपकार से मन हरषा...2...गुरुवरजी
श्रुतपरम्परा को ध्याया...2 कि श्रुत अभ्यास किया...2 जिनवाणी

होऽऽऽ धरसेन आचार्य महान्...2 श्रुत रक्षा का है ध्यान...2 गुरुवरजी
एक छुल्लक जी को भेजा...2 कि योग्य शिष्य को लाने...2 गुरुवरजी

दो सुयोग्य शिष्य बुलाये...2 भूतबली पुष्पदन्त आये...2 गुरुवरजी

परीक्षण दोनों का किया...2 कि मंत्र द्वारा योग्य पाये...2 गुरुवरजी
दोनों को श्रुतज्ञान है दिया...2 कि तीनों जन हरषाये...2 गुरुवरजी
स्वसमाधि निकट है जाना...2 कि शिष्यों को विदा किया...2 गुरुवरजी

दोनों शिष्यों ने षट्खण्ड रचा...2 कि सूत्रबद्ध ज्ञान किया...2 गुरुओं ने
रचना का महोत्सव मनाया...2 कि श्रुत पर्व कहलाया...2 जिनवाणी
रथयात्रा महोत्सव हुआ...2 कि श्रुत/(आगम) लिपिबद्ध हुआ...2 जिनवाणी
तब से ये परम्परा चली...2 कि श्रुत/(वाणी) महिमा भारी...2 श्रुतदेवी

परम्परा आचार्यों द्वारा...2 सूत्रबद्ध श्रुत/(आगम) प्यारा...2 सूरीवरजी
प्रथमानुयोग है पुराण...2 कि इतिहास बतलाते...2 सब काल का
करणानुयोग है गणित...2 कि ब्रह्माण्ड रहस्य भरा...2 साराजी
चरणानुयोग चारित्र...2 कि भव्यों को प्यारा...2 जिनवरजी

द्रव्यानुयोग आध्यात्म न्यारा...2 कि आत्म वैभव वाला...2 प्रभुवरजी
स्वाध्याय परम तप आला...2 कि शुभभाव बढ़ाने वाला...2 गुरुवाणी
कलिकाल में तप जो हुआ...2 अंतरंग तप कहलाया...2 गुरुवरजी
सातिशय पुण्य भी इससे...2 असंख्यात कर्म झरे...2 जिनवाणी

अभ्युदय अपवर्ग सुख मिले...2 'कनकनन्दी' भी पाये...2 जिनवरजी

स्वाध्याय का स्वरूप व फल

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : मेरी बहू है रानी है....., छोटी-छोटी गैया....., सायोनारा.....)

स्वाध्याय से ज्ञान होता है/(होता है), इह-परलोक व मोक्ष तक।
आत्मा-परमात्मा व ब्रह्माण्ड का होता है ज्ञान सूक्ष्म तक।। (1)

स्व-अध्ययन ही स्वाध्याय है जिससे आत्मा का होता बोध।
आत्मा से पर अनात्मा का होता है सही-सही बोध।। (2)

आत्मा है चैतन्य ज्ञानानन्द, अनादि-अनिधन-शाश्वतिक।
स्वयंभू-स्वयंपूर्ण-सनातन, अव्यय-अविनाशी-अमूर्तिक।। (3)

सत्य-शिव-सुंदर सर्वश्रेष्ठ, सच्चिदानन्दमय सर्वज्येष्ठ।
परम तत्त्व व श्रेष्ठ सत्य परम धर्म व तीर्थ ज्येष्ठ।। (4)

आत्मा से भिन्न है राग-द्वेष, काम-क्रोध-मोह-दुःख-शोक।

जन्म-जरा-मृत्यु-रोग-क्लेश, द्रव्यभाव व नोकर्म।। (5)

शत्रु-मित्र-भाई-बंधु-सखा-माता-पिता-सुत-सुता-सत्ता।
ख्याति-पूजा-लाभ व तन-मन, इन्द्रिय भोगादि न शुद्ध आत्मा।। (6)

अनात्म भाव को दूर करने हेतु, स्वाध्याय से प्राप्त बोध से।
मनन-चिन्तन अनुप्रेक्षा से, अनात्म भाव त्याग समता से।। (7)

संयम-तप-ध्यान-सहिष्णुता, उदार-निस्पृह व वीतरागता।
जिससे आत्मा होता शुद्ध-बुद्ध, 'कनक' चाहे निज परमात्मा।। (8)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 16.02.2015, प्रातः 7.27

परमात्मा के आशीर्वाद प्राप्त करने के उपाय व फल

(चाल : मिलो न तुम तो.....)

क्षण-क्षण निशिदिन तुम्हें ही ध्याऊँ...मंगलमय परमात्मा...
करूँ मैं वंदना...हो...करूँ मैं अर्चना...(ध्रुवपद)...

तुम्हीं मेरे तारण-तरणऽऽऽ रक्षक-उद्धारक-पालक होऽऽऽ
तेरे आशीर्वाद से हीऽऽऽ बनूँगा मैं सिद्धेश्वरऽऽऽ
अतः मैं तेरे प्रसाद चाहूँ...हर दिन-हर पल...करूँ मैं...(1)...

प्रसाद तेरा तब मिलताऽऽऽ राग-द्वेष जब मैं त्यागूँगाऽऽऽ
ईर्ष्या-द्वेष-घृणा एवंऽऽऽ मोह-ममत्व सर्व त्यागूँगाऽऽऽ
सत्य-समता-शांति-शुचिता...हर पल मैं भोगूँ...करूँ मैं...(2)...

संकल्प-विकल्प एवंऽऽऽ संक्लेश सर्व त्यागूँ मैंऽऽऽ
ख्याति-पूजा एवं लाभऽऽऽ प्रसिद्धि सर्व त्यागूँ मैंऽऽऽ
तेरा ही मनन व चिन्तन...सतत करूँ ध्यान...करूँ मैं...(3)...

तेरी सत्ता में निहित हैऽऽऽ अनन्तानन्त गुण-गणऽऽऽ
ज्ञान-दर्शन-सुखऽऽऽ वीर्य अगुरुलघु गुणऽऽऽ
अस्तित्व-वस्तुत्व व...प्रमेयत्व प्रभुत्व...करूँ मैं...(4)...

मेरे ही अपराध सेऽऽऽ तुम हुए अप्रसन्नऽऽऽ
मेरा है अपराधऽऽऽ राग-द्वेष एवं मोहऽऽऽ
इन सभी अपराधों को मैं...कर रहा हूँ त्याग...करूँ मैं...(5)...

ओ मेरे परमात्माऽऽऽ तू ही मेरा शुद्ध रूप हैऽऽऽ

मुझसे ही मेरे द्वाराऽऽऽ मिलता मुझे आशीर्वाद हैऽऽऽ
शुद्ध-बुद्ध-आत्मानन्द को...'कनक' नित्य भोगूँ...करूँ मैं...(6)...

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 15.02.2015, मध्याह्न 2.20

परम सत्य की दृष्टि से बिग-बैंग व जीव उत्पत्तिवाद टाइम व स्पेस सिद्धांत भी असत्य

-वैज्ञानिक श्रमणाचार्यश्री कनकनन्दी

(चाल : छोटी-छोटी गैया.....)

सत्य है सनातन अनादि अनिधन, स्वयंभू स्वयंपूर्ण अविनाशी।
नित्य ही नूतन (व) नित्य भी पुरातन, अनंत गुण पर्याय युक्त अविभागी
/(अखण्डित)...(1)

उत्पाद सह व्यय से होता समन्वित, तथापि ध्रौव्य से भी होता संयुक्त।
होता परिणमन तथापि अनिधन, अनादि अनंत है स्थितिवान्।।
सत्य न होता नाश अतः है शाश्वत, तथाहि असत्य भी न होता उत्पन्न।
होता परिणमन तथापि न उत्पन्न, उत्पाद व्यय व ध्रौव्य सम्पन्न।। (2)
सत्य में होते गुण अनंत गुण-गण, गुणों में होता है परिणमन।
गुण परिणमन से न होता सत्य-नाश, यह है सत्य का द्रव्यत्व गुण।।
अस्तित्व अन्य गुण सत्य में विद्यमान, जिससे सत्य होता अस्तित्ववान्।
अस्तित्व से सत्य होता है अविनाश, अनादि अनिधन सनातन।। (3)
वस्तुत्व एक गुण सत्य में विद्यमान, जिससे सत्य होता है क्रियावान्।
अतः क्रिया होती अनंतानंत क्रिया, जिससे सत्य होता सदा कर्त्ता।।
प्रमेयत्व एक गुण सत्य में अवस्थान, जिससे सत्य का होता परिज्ञान।
प्रदेशत्व अन्य गुण सत्य में विद्यमान, जिससे सत्य होता है आकारवान्।। (4)
अगुरुलघुगुण सत्य का एक गुण, जिससे सत्य न होता छिन्न-भिन्न।
गुण न बिखरता सत्य न असत्य होता, उत्पाद व्यय ध्रौव्य सतत होता।।
यह है परम सत्य जो है महासत्ता, जिससे बने है विश्व-प्रतिविश्व।
इसके भेदान्तर जीव-अजीव प्रकार, मूर्तिक-अमूर्तिक व शुद्ध-इतर।। (5)
जीव चैतन्यमय शुद्ध व अशुद्ध, संसारी व मुक्त जीव अनंतानंत।
अजीव पाँच प्रकार मूर्तिक व इतर, पुद्गल धर्म-अधर्म-आकाश-काल।।
मूर्तिक होता भौतिक अणु से ब्रह्माण्ड (तक), स्पर्श-रस-गंध-वर्ण-दृश्य-अदृश्य।

सूर्य चन्द्रादि ग्रह नक्षत्र बादल विद्युत् (तक), शरीर इन्द्रिय मन व भोजन तक।। (6)
धर्म गति सहायक अधर्म स्थिति निमित्त, आकाश अवकाश देता लोक-अलोक।
काल परिणमन सहायक निश्चय काल निमित्त, व्यवहार काल होता दिन रात।।
इसी से सिद्ध होता ब्रह्माण्ड भी शाश्वत, तथाहि सम्पूर्ण है जीव-जगत्।
इसी से होता सिद्ध बिग-बैंग सिद्धांत, नहीं है सत्य-तथ्य अविभ्रान्त।। (7)
जीव उत्पत्ति सिद्धांत डार्विन प्रतिपादित, नहीं है सत्य वह क्रम विकास।
स्पेस-टाइम सिद्धांत ऐसा ही है गलत, मूल में ही भूल तथा भ्रम सहित।।
विस्तार से परिज्ञान के निमित्त, मेरे अनेक ग्रंथ हैं प्रकाशित।
जिज्ञासु करो है वहाँ से अध्ययन, 'कनक' को मान्य है सत्य/(तथ्य) विज्ञान।। (8)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, उदयपुर, दिनांक 13.02.2015, रात्रि 8.52

तो कभी हुआ ही नहीं था बिग-बैंग!

रहस्य ही बना रह सकता है पृथ्वी का आदि-अंत...

-वैज्ञानिकों को सन्देह!

वाशिंगटन @ पत्रिका-भौतिक विज्ञानियों के नये सिद्धांत का यकीन करे तो दुनिया के आदि-अंत का पता लगाने का दावा करने वाला द बिग-बैंग कभी हुआ ही नहीं। दरअसल बिग-बैंग थ्योरी में क्वांटम नंबर संबंधी अशुद्धि सामने आई है। पृथ्वी के 13.8 अरब साल पहिले उत्पत्ति पर अध्ययन किया गया। इसमें सामने आया कि पृथ्वी पर मौजूद हर चीज की उत्पत्ति एकल असीम घने बिन्दुओं से हुई है, इसे बिग-बैंग नाम दिया गया। अब यह सवाल सामने आ रहे हैं कि क्या वाकई में कोई बिग-बैंग जैसी घटना हुई भी थी या नहीं? विज्ञान के अनुसार ब्रह्माण्ड की उत्पत्ति 13.8 अरब साल पहले हुई थी न कि पृथ्वी की

हालाँकि सापेक्षता नियम के मुताबिक बिग-बैंग की बात को काफी ने सही माना। कुछ ने सन्देह जताते कहा था कि सही होने की संभावना प्रायिकता पर आधारित है। बेन्हा विश्वविद्यालय के अहमद फराज अली और लेथब्रिज विश्वविद्यालय के सौर्यादास का दावा है कि नया मॉडल बिग-बैंग को चुनौती दे सकता है। ब्रह्माण्ड का कोई आदि-अंत नहीं है। **राजस्थान पत्रिका, दिनांक 12.02.2015 से साभार**

संदर्भ-

लोगो अकिट्ठम खलु अणाइणिहणो सहावणिव्वत्तो।
जीवाजीवेहिं फुडो सव्वागासावयवो णिच्चो।। (त्रिलोकसार गा.4)

अण्णोण्ण-पवेसेण य दव्वाणं आच्छणं हवे लोओ।
दव्वाणं णिच्चत्तो लोयस्स वि मुणह णिच्चत्रं।। (116)

आचार्य कनकनन्दी के साहित्य-

(1) विश्व विज्ञान रहस्य (2) विश्व द्रव्य विज्ञान आदि 30-35 ग्रंथ

सारे जहाँ से अच्छा गुरुकुल है हमारा

-श्रमणी सुवत्सलमती

(चाल : सारे जहाँ से अच्छा.....)

सारे जहाँ से अच्छा...गुरुकुल है हमारा...
'कनक' गुरु हैं नायक...ये संघ है निराला...निराला...सारे जहाँ...(ध्रु.)

उद्देश्य जिसके ऊँचे...वैश्विक प्रभावकारी...
विज्ञान के जगत् में...आत्म कल्याणकारी...

वैज्ञानिक गुरुवर...दुनिया टिकाये माथा...सारे जहाँ...(1)
होठों पे खेलती है...आगम की सारी गाथा...

बहती है ज्ञान गंगा...अविरल जैसे झरना...
आगम रहस्य खोले...अपूर्व आनंदमयी...सारे जहाँ...(2)

सत्य-समता-शांति...की है प्रयोगशाला...
देशी-विदेशी आते...पाते समाधान आला...
'सुवत्सल' भाव से...करे अनुमोदना.....सारे जहाँ...(3)

पावन चार भावनाएँ

(चाल : गंगा तेरा पानी अमृत....., कसमें-वादे.....)

'मैत्री' तेरी धारा अमृत, सर्वत्र बहती जाए ऽऽऽ
हर जीव में आत्मीयभाव, तेरी कृपा से होय ऽऽऽ...(टेक)

सत्वेषु मैत्री तेरा स्वरूप, 'विश्वबंधुत्व' कहाय ऽऽऽ
'हर जीव भी सुखी रहे' (ऐसी) भावना तेरी कृपा से होय ऽऽऽ
तुझसे ही 'विश्वशांति' संभव, अन्यथा संभव न होय...मैत्री तेरी...

'प्रमोद' भावना तेरी भी जग में, सर्वत्र जयवन्त होय ऽऽऽ
गुण-गुणी में प्रमोद होने से, जीव भी गुणवन्त होय ऽऽऽ
तेरे ही कारण भक्ति-श्रद्धा-पूजा-आदर-सत्कार/(वैयावृत्ति) होय...मैत्री तेरी...

'कृपा' भावना तेरे ही कारण, दयादत्ति सेवा होय ऽऽऽ

रोगी-वृद्ध-दीन-हीन-असहाय की, रक्षा सहायता होय ऽऽऽ
अभय-सुरक्षा भी तेरी कृपा से, जग में प्रवर्तन होय...मैत्री तेरी...

माध्यस्थ भाव हो! परम पावन, राग-द्वेष परे तू ही ऽऽऽ
शत्रु-मित्र-लाभ-हानि परे, परम साम्य रूप तू ही ऽऽऽ
तेरी प्राप्ति हेतु 'कनकनन्दी', ध्यान-अध्ययनरत होय...मैत्री तेरी...

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 12.02.2015, अपराह्न 5.17

हमको है अभिमान

-श्रमणी सुवत्सलमती

(चाल : भारत देश महान्.....)

गुरुवर है महान्...2
गुरु हमारे कनकनन्दी...हमको है अभिमान...2...गुरुवर...
सारे विश्व के नयन सितारे...अति पुरोगामी...2
धर्म-दर्श-विज्ञान समन्वित...आधुनिक ज्ञानी...2...गुरुवर...
अध्यात्म से नेह धरे...अनुभव ज्ञान बतावे...2
अनेकान्त है आत्मा जिनका...स्याद्वाद वाणी...2...गुरुवर
इनके ज्ञान-विज्ञान की महिमा...सब जग ने मानी...2
जैन एकता जन एकता...लक्ष्य है महान्...2...गुरुवर...
प्रतिक्षण साधनारत हैं...निस्पृह दिगम्बर...2
सुवत्सल भाव पूर्ण है...मोक्ष परम लक्ष्य...2...गुरुवर...

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 05.02.2015
(आचार्य कनकनन्दी की 35वीं दीक्षा जयंती के उपलक्ष्य में)

धर्म-दर्शन विज्ञान शिविर का महत्व

(चाल : ये देश है वीर जवानों का (भांगड़ा).....)

ये शिविर है धर्म दर्शन का...विज्ञान गणित व नियमों/(नीति) का
इस शिविर का महत्व न्यारा है...बालक वृद्धों का प्यारा है...
हो ओऽऽऽऽ हो ओऽऽऽऽ आऽऽऽऽ आऽऽऽऽ (स्थायी)
यहाँ धर्म-दर्शन-विज्ञान पढ़े...गणित नियमों का पाठ पढ़े...
यहाँ हर धर्म-जाति...होऽऽऽ...यहाँ देशी-विदेशी आते है...

सत्य-तथ्य को पढ़ते है...सहयोग शान्ति पाते है।
हो ओऽऽऽऽ हो ओऽऽऽऽ आऽऽऽऽ आऽऽऽऽ...(1)

कट्टरता रूढ़ि को त्यागते है...उदार सहिष्णु बनते हैं
दयादान सेवा करते हैं...होऽऽऽ भाव विश्व कल्याण का भाते हैं...
अनुशासन शिक्षा पाते हैं...
हो ओऽऽऽऽ हो ओऽऽऽऽ आऽऽऽऽ आऽऽऽऽ...(2)

सदाचार-नीति सीखते हैं...सनम्र सत्यग्राही बनते हैं
महान् लक्ष्य को...होऽऽऽ समता शांति से पाते हैं।
कनक गुरुवर से सीखते है...
हो ओऽऽऽऽ हो ओऽऽऽऽ आऽऽऽऽ आऽऽऽऽ...(3)

फैशन-व्यसनों को त्यागते है...व्यायाम-ध्यान/(योग) सीखते हैं-
तन-मन-आत्मा से होऽऽऽ...स्वस्थ्य सबल बनते हैं
मुक्ति के लिए यह करते है...
हो ओऽऽऽऽ हो ओऽऽऽऽ आऽऽऽऽ आऽऽऽऽ...(4)

आध्यात्मिक-शक्ति-संवर्द्धन करूँ

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : रघुपति राघव....., एक परदेशी....., शत-शत वन्दन.....)

शक्ति संवर्द्धन मैं करता जाऊँ, निस्पृह निराडम्बर बनता जाऊँ।
संकल्प-विकल्प मैं छोड़ता जाऊँ, संक्लेश भाव से मैं बचता जाऊँ।।

ईर्ष्या-द्वेष-घृणा मैं त्यागता जाऊँ, आकांक्षा तृष्णा मैं छोड़ता जाऊँ।
समता-शांति को मैं बढ़ाता जाऊँ, आध्यात्मिक-शक्ति को बढ़ाता जाऊँ।।

आकर्षण-विकर्षण से परे मैं रहूँ, लन्द-फन्द-द्वन्द्व से मैं बचता जाऊँ।
तनाव-उदासीन से परे मैं रहूँ, संतोष-प्रसन्न में रमता जाऊँ।।

एकांत-मौन में मैं साधना करूँ, ध्यान-अध्ययन व लेखन करूँ।
हित-मित-प्रिय वचन बोलूँ, निन्दा अपमान भी कभी न करूँ।।

मैत्री-प्रमोद-कारुण्य भाव मैं धरूँ, विश्वहितकारी भाव वात्सल्य धरूँ।
उदार प्रशस्त भाव धारण करूँ, अहं-दीन-हीन भाव न धरूँ।।

दबाव-प्रलोभन भाव धारण न करूँ, प्रसिद्धि हेतु कुछ काम न करूँ।
निराशा हतोत्साह से परे मैं रहूँ, भय व दुर्भावना से मुक्त मैं रहूँ।।

आत्मावलम्बी, आत्मविश्वासी बनूँ, आत्मानुशासी, आत्मसंयमी बनूँ।
ढोंग-पाखण्ड आडम्बर को त्यागूँ, अन्धानुकरण भेडीयाचाल त्यागूँ।।

आत्मविश्लेषण आत्मसुधार करूँ, समय शक्ति का दुरूपयोग करूँ।
धैर्यशाली सहिष्णु-शांत मैं बनूँ, आध्यात्मिक शक्ति युक्त/(सम्पन्न/सह) 'कनक' बनूँ।।

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 24.02.2015, मध्याह्न 12.47

मैं हूँ (आ. कनकनन्दी) प्राथमिक विद्यार्थी क्योंकि
(सर्वज्ञ ही है स्नातक अन्य सभी प्राथमिक विद्यार्थी)

-आचार्य कनकनन्दी

(चाल : चलो दिलदार चलो.....)

चलो! सत्यकामी चलो! ज्ञान अर्जन/(आराधना) करो!
संकीर्ण भाव छोड़ो! आध्यात्मिक भाव धरो!

संकीर्ण स्वार्थ छोड़ो! परमार्थ भाव धरो!
क्रोध-मान-माया छोड़ो! लोभ-मोह दूर करो!।। (1)

दुराग्रह सर्व छोड़ो! हठाग्रह नहीं करो!
वाद-विवाद छोड़ो! कुतर्क नहीं करो!

सत्यग्राही-नम्र बनो! जिज्ञासु ग्राही बनो!
तोता-रटन्त छोड़ो! अनुभव ज्ञानी बनो!।। (2)

इन्द्रियातीत बनो! यांत्रिक परे बनो!
मन से परे चलो! अमूर्तिक ज्ञान करो!

सर्वज्ञ आज्ञा पालो! प्रज्ञा को तीक्ष्ण करो!
सदाचार सदा पालो! स्वाध्याय सदा करो!।। (3)

मूढ़ता नहीं पालो! शठता नहीं करो।
प्रमाद दूर करो! आलस्य नहीं धरो!

पावन भाव करो! महान् लक्ष्य धरो!
संशय-भ्रम छोड़ो! सत्य-तथ्य ज्ञान करो!।। (4)

सर्वज्ञ बिना सभी होते अल्पज्ञ जीव,
लेखक दार्शनिक आचार्य वैज्ञानिक/(कवि) (जन)।

अधिवक्ता/(वकील) न्यायाधीश मंत्री व राष्ट्राधीश

अतः इनके ज्ञान नहीं है पूर्ण सत्य।। (5)

इनसे परे जानो! सत्य का होगा ज्ञान,
विद्यार्थी निज को मानो! सर्वज्ञ हेतु बढ़ो!

अज्ञान मोह हनो! राग-द्वेष को नाशो!
सर्वज्ञ तभी बनो! अन्यथा शिष्य बनो!।। (6)

सुमतिश्रुतज्ञान परोक्ष ज्ञान मानो,
केवलज्ञान ही है सर्व-प्रत्यक्ष-ज्ञान।

केवलज्ञानी ही है, यथार्थ से स्नातक,
स्नातक हेतु ही है, 'कनक' बना छात्र।। (7)

हिरणमगरी, सेक्टर-11, दिनांक 25.02.2015, रात्रि 8.42
(कवि (आचार्य कनकनन्दी) स्वयं को छोटा-भोला छात्र मानने
का रहस्य इस कविता में वर्णित है।)